

संस्मरण

श्रद्धान्जलि

परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी स्मरणानन्दजी महाराज
षोडश संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ

ऐसा सोचना भी कितना अविश्वसनीय जैसा लगता है कि आज हमारे बीच परम पूजनीय श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी महाराज और नहीं रहे। सहज में यह विश्वास करना मुश्किल ही होता है कि वे हम सभी को छोड़ कर रामकृष्ण-लोक चले गये हैं, इसका कारण यही है कि वे रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के विभिन्न-कार्यों के साथ अभिन्न रूप से जुड़े हुए थे और उनसे अनुप्रेरणा प्राप्त कर हम सभी बहुत से कार्यों में गति प्राप्त कर रहे थे।

सब ही समय मैंने उनमें, एक आदर्श संन्यासी की सभी विशिष्टताओं से भरा एक महत् जीवन का दर्शन किया है। उनके साथ मेरा सम्पर्क लगभग चालीस वर्षों से अधिक ही रहा है। कोलकाता में रामकृष्ण मिशन शिशुमंगल प्रतिष्ठान में उस समय वे एक साधुकर्मी के रूप में आए थे। वहाँ के सहायक सचिव भी हुए। फिर वहाँ सचिव पद पर लम्बे समय तक रह कर ठाकुर-सेवा करते रहे। शिशुमंगल प्रतिष्ठान ने उनके अवस्थानकाल में ही क्रमशः विराट वटवृक्ष के रूप में ख्याति पाई थी और उनके नेतृत्व में वह अस्पताल रामकृष्ण मिशन सेवा-प्रतिष्ठान के नाम से एक जनरल अस्पताल के रूप में परिणत हुआ। वर्तमान में यह लगभग छःसौ बिस्तरों का विराट अस्पताल है तथा इसमें बहुत से विशिष्ट चिकित्सा विभाग भी हो गये हैं।

यह उनके जीवन की ओर एक तरफा अवलोकन हुआ। किन्तु प्राकृत रूप में वे एक संन्यासी थे और उसी पक्ष में उन्हें समझने की चेष्टा करनी चाहिए। उनके व्यक्तित्त्व का सौन्दर्य था, सभी के

प्रति एक अपूर्व सहानुभूति। कोई भी जीवन व्यर्थ नहीं है। सभी के प्रति ये सहानुभूति भाव ही उनके अन्दर हमने सब समय ही दृष्टिगोचर किया है। सामान्य स्तर का कोई व्यक्ति हो या कोई बड़ा कहलाने वाला, जो भी, सभी के प्रति व्यवहार अच्छा हो यह उनकी विशेषता थी। जो भी कारण से क्यों न हो, साधु-ब्रह्मचारी यदि कोई अन्य प्रकार से व्यवहार करता तो, उसे अलग से बुलाकर वे बोलते, तुमने यह ठीक नहीं किया है। उन लोगों को ऐसे कठोर वचन क्यों बोलोगे ? वे किसी के भी मन को कष्ट देकर कुछ करना पसंद नहीं करते थे। यह उनका एक बहुत ही बड़ा गुण था।

उनके काम-काज के बीच और एक विषय विशेष भाव से लक्ष्य करने लायक था। सेवा प्रतिष्ठान के काम से हो या अन्य किसी काम से हो, कई बार कई प्रकार की जटिल समस्याएँ उपस्थित हो जाती थी। कार्य में ऐसा होना तो स्वाभाविक भी है। ऐसी समस्याएँ आने पर बहुत से लोग व्यस्तता के कारण विचलित हो पड़ते हैं, किन्तु वे ऐसे आचरण करते जैसे कुछ हुआ ही नहीं हो। श्रीमद्‌भगवदगीता में आता है ''यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते'' - जिसमें स्थित होने से बड़े से बड़े दुःख में भी व्यक्ति विचलित नहीं होता है। यह उन्हीं लोगों के लिए ही सम्भव होता है जो योग के पथ पर या आध्यात्मिक पथ पर महती उन्नति प्राप्त किए हो। उनके संस्पर्श मे जो भी आए हैं, उनके इन सभी गुणों को देखकर मुग्ध हो जाते थे।

और एक विषय मैं यहाँ उल्लेख कर देना चाहता हूँ। हम लोग जिनको प्राइवेट् आश्रम कहा करते हैं, अर्थात जिन आश्रमों की परिचालन बेलूड़ मठ कार्यालय के अधीन नहीं है, अर्थात जिन आश्रमों को भक्त लोग स्वयं निर्माण कर प्रबन्धन करते हैं, उन सभी को उत्साह देने के लिए रामकृष्ण-विवेकानन्द-भावप्रचार परिषद का गठन हुआ। सह संघाध्यक्ष के रूप में गहनानन्दजी महाराज ने ऐसे बहुत से दुर्गम स्थानों में अवस्थित आश्रमों का

भ्रमण किया। वहाँ उनके लिए प्रयोजनीय सुविधाएँ अच्छी रहे, ऐसी सम्भावना भी न थी। पर उनके मुख से एक भी शब्द ऐसी कमियों के प्रति निसृत न हुआ और न ही कभी उसकी उन्होंने किसी से शिकायत भी की। अन्य व्यवस्थापकगण विस्मय होकर सोचते कि ये क्या हुआ ? सह-संघाध्यक्ष महाराज आए हैं, व्यवस्थादि ठीक से नहीं हुई है ! महाराजजी को रहने और दीक्षादि में असुविधा हो सकती है ! पर वे बोलते, ये सब कुछ बताने की आवश्यकता नहीं है। उन लोगों ने यथासाध्य अपने हिसाब से व्यवस्था तो की ही है। उन लोगों में अटूट श्रद्धा है। हो सकता है इससे अधिक वे कुछ और व्यवस्थाएं कर नहीं पाए। उन लोगों को इससे अधिक और किसी वस्तु के लिए बोलकर उनके मन को कष्ट देना अच्छा प्रतीत नहीं होगा। सभी परिस्थितियों में अपने को समझा लेना और किसी के भी मन को कष्ट न देना, ये उनके जीवन का अपूर्व वैशिष्ट्य था। इस हेतु प्राइवेट् आश्रमों के सदस्यवृन्द उनके प्रति कृतज्ञ थे। उनके प्रति उनकी विशेष श्रद्धा थी। महाराजजी से इन सभी आश्रमों के सदस्यवृन्द अनुप्रेरणा-प्राप्त कर अपने सेवा-कार्यों में उत्साह पाते थे। विशेष रूप से उत्तर पूर्वाचंल - जैसे आसाम, पश्चिमबंगादि अन्य राज्यों को भी वे अनुप्रेरित करते रहे। वे बोलते आगे बढ़ो, और सेवा कार्य करते चलो।

वे ज्यादा वार्तालाप नहीं करते थे। छोटे से वार्तालाप में सूत्र के रूप में बोल देते थे। उनको थोड़ा सोच-विचार कर समझना पड़ता। इसी प्रकार वे बोलते कि तुम लोगों को आत्मविश्वास की आवश्यकता है। ये सब ही श्रीश्रीठाकुरजी का ही कार्य है। एक बात वे सभी को ही कहते, श्रीश्रीठाकुरजी का कार्य करने के लिए हम सभी आए हैं। उनका भाव था, साधारण काम हो या बड़ा काम, किसी भी कार्य की अवहेलना करना उचित नहीं है। प्रत्येक कार्य श्रीश्रीठाकुरजी का ही, यही भाव उनके अन्तर में सर्वांग सम्पूर्ण सौन्दर्य के साथ प्रकट होता था।

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के सह संघाध्यक्ष के रूप में, संघ के कर्णधार के रूप में उनका शरीर-स्वास्थ्य काफी अच्छा ही था। उस समय के अन्तराल में मठ और मिशन के अनेक आश्रमों में वे गये थे। प्राइवेट आश्रमों में भी वे गये थे। संघाध्यक्ष होने के पश्चात् कुछ महिनों में ही उनका शारीरिक स्वास्थ्य बिगड़ने लगा था। तब पहले जैसे वे कहीं जा नहीं पाए। संघाध्यक्ष होने पर बेलूड़-मठ में एक समान रूप से दीक्षा का कार्यक्रम चलता रहा। दीक्षार्थियों की संख्या इतनी रहती थी कि स्वास्थ्य ठीक न रहने पर भी वे दीक्षा प्रदान करते रहते थे। ऐसे व्यक्तित्व के धनी एक संन्यासी, जिन्होंने रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के चतुर्दश संघाध्यक्ष के पद को सुशोभित किया, उनके संस्पर्श में जो भी आया, रामकृष्णरूपी अध्यात्म-चेतना के मार्ग में अग्रसर हो गया।

आज वे हमारे बीच स्थूलदेह में नहीं है। वे अपने शरीर, मन, बुद्धि, अपने सर्वस्व को श्रीश्रीठाकुरजी के पादपद्मों में समर्पित कर रामकृष्ण-लोक में भगवान श्रीरामकृष्णदेव के निकट प्रस्थान कर गये।

यह रामकृष्ण संघ, स्वामीजी के अनुसार, डेढ़ हजार वर्षों तक चलेगा। इस बेलूड़मठ से उत्सर्गित आध्यात्मिक भावप्रवाह सारे विश्व में वितरित होगा। उसी प्रकार के विभूति-सम्पन्न लोग इस मर्त्यधाम में आते हैं और अपना कुछ न कुछ अवदान देकर यहाँ से चले जाते हैं। स्वामी गहनानन्दजी महाराज भी अपनी स्थूल देह यहाँ छोड़ कर, हमारे सम्मुख महान जीवन के रूप में अपना श्रेष्ठ योगदान कर के चले गए।

उनके श्रीचरणों में मेरी श्रद्धांजलि और प्रणाम।

(सन् २००७ के १६ नवम्बर, बेलूड़-मठ में आयोजित स्वामी गहनानन्दजी महाराज की स्मृति सभा में दिये गये भाषण का हिन्दी में अनुवाद स्वामी तत्परानन्दजी ने किया।)

स्वामी गहनानन्दजी महाराज की स्मृति कथा

ब्रह्मलीन परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी प्रमेयानन्दजी महाराज
तत्कालीन सहसंघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ

बंगला ग्रन्थ 'स्वामी गहनानन्द - एक उत्सर्गित जीवन' के सम्पादक स्वामी चैतन्यानन्द ने मुझे पूज्य महाराजजी की स्मृति में कुछ संस्मरणों को लिपिबद्ध करने का अनुरोध किया। किन्तु स्मृति कथा लिखने का एक प्रधान दोष होता है कि जिसके सम्पर्क में लिखा जाता है, उसका व्यक्तित्व तो एक तरफ रह जाता है, और लेखक स्वयं को ही सम्पूर्ण स्मृतियों में सर्वाधिक स्थान दे बैठता है। ऐसा नहीं कह सकते हैं कि मेरे लेखन में भी ये दोष नहीं रहेंगे। अब जैसा भी हो मैं प्रयास करता हूँ।

पूजनीय गहनानन्दजी महाराज जी को सर्वप्रथम १९५३ के मार्च के अन्त में ही देखा। मार्च के शुरू में वे शिलाँग आश्रम के कर्मी के रूप में आए थे। मार्च के अन्त में आश्रम में एक बड़े उत्सव के आयोजन की तैयारी चल रही थी। मन्दिर में भगवान श्रीश्री रामकृष्ण देव की संगमरमर की मूर्ति की स्थापना होनी थी। तत्कालीन संघाध्यक्ष पूजनीय स्वामी शंकरानन्दजी महाराज मूर्ति के प्रतिष्ठापन हेतु आने वाले थे। इस उपलक्ष्य में बेलूड़ मठ और अन्य विभिन्न केन्द्रों से वरिष्ठ और प्राचीन संन्यासी भी आ रहे थे। हम सभी उस समय एक स्थान पर दिन-रात परिश्रम के साथ पुनर्वास एवं राहत कार्य कर रहे थे। उत्सव के कार्यों में अपनी सहभागिता हेतु हम लोग शिलाँग आश्रम में आए हुए थे। उस समय ही स्वामी गहनानन्दजी महाराज को पहली बार देखना हुआ। उत्सव के व्यस्ततम कार्यक्रमों के बीच उनसे कुछ विशेष वार्तालापादि नहीं हो पाए। कुछ महिनों में हमारा पुनर्वास एवं

राहत कार्य समाप्त हुआ। उस समय मुझे बेलूड़ मठ से शिलाँग आश्रम में कर्मी के रूप में भेजा गया। सम्भवतः जुलाई-अगस्त में मैं शिलाँग पहुँचा हूँगा। तब से स्वामी गहनानन्दजी महाराज के प्रयाण तक उनकी छत्र छाया में रहा और उनका स्नेह भाजन बना रहा।

मैं जब शिलाँग आश्रम में आया तब स्वामी गहनानन्दजी महाराज मन्दिर में श्रीश्री ठाकुरजी की पूजा-अर्चना के दायित्वों का निर्वाह कर रहे थे। आश्रम-कार्यालय का दायित्व भी उन्हीं के उपर था। उस पर ये पूजा का दायित्व। पूजा कार्य में नियमितता और कार्यालय के अनियमित भार के बीच भी उनमें किसी भी प्रकार का कोई आक्षेप नहीं देखा जाता। आश्रम में भी जब कभी अतिरिक्त कार्यभार उन पर आ पड़ता, उसे भी हँसते-हँसते करते हुए दिखाई पड़ते। मेरे आने पर पूजा का दायित्व मुझे दिया गया। पूजा के अतिरिक्त बीच-बीच में कार्यालय में भी मैं उनकी सहायता के लिये जाया करता था।

शिलाँग में देखा कि वे आश्रम के कार्यों के लिए सारा दिन ही परिश्रम करते थे और जब संघ के वृहत्तर कार्यों के दायित्त्वों का भार उन पर पड़ा, तब भी उनमें वही उत्साह देखने को मिलता। शिलाँग पहाड़ियों पर बसा हुआ एक सुरम्य स्थान है। पहाड़ियों से घिरा होने के कारण रविवारीय सत्संग हेतु भक्त लोगों का आश्रम में आना सर्वदा सम्भव नहीं हो पाता था। इसका हल उन्होंने कुछ ऐसे निकाला कि आश्रम में रविवारीय सत्संग के साथ-साथ विभिन्न स्थानों में भक्तों को एकत्र कर सत्संग करने के लिए पाठ-चक्रों में जाया करते थे। उस समय आवागमन की आज जैसी सुविधा नहीं थी। आश्रम से निकलकर बस पकड़नी पड़ती थी फिर गन्तव्य स्थान पर पहुँच कर पाठ-चक्रों तक पहुँचने के लिए कभी-कभी १ किलोमीटर पैदल भी पहाड़ी पर चढ़ना पड़ता था। उनकी इस पैदल-यात्रा में कोई न कोई स्थानीय भक्त भी उनके संग का लाभ लेते।



खासी (उस अँचल के लोग अपनी स्थानीय बोली 'खासी' बोलने के कारण 'खासी' कहलाते हैं।) भक्तों के प्रति उनकी विशेष दृष्टि थी। उनकी आने वाली पीढ़ी को किस प्रकार वे अर्थोपार्जन युक्त विद्या दे पायें और उन्हें शिक्षा के प्रति जागरूक करने हेतु विशेष प्रयत्नरत रहते। उस समय बहुत से 'खासी' भक्तों ने पूज्यपाद स्वामी शंकरानन्दजी और स्वामी विशुद्धानन्दजी महाराज के पास मन्त्र दीक्षा भी प्राप्त की थी। कुछ होनहार बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था उन्होंने सरिषा, रामकृष्ण आश्रम में भी कर दी थी।

वर्ष १९५८ में वे शिलाँग से सेवा प्रतिष्ठान के कर्मी के रूप में स्थानान्तरित हो कर आए। वर्ष १९६० में मेरा भी स्थानान्तरण बेलूड़ मठ हो गया।

सभी परिस्थितियों में अपने को अवस्थानुरूप व्यवस्थित कर पाने की उनमें अद्‌भुत क्षमता थी। कहीं-कहीं हम लोगों को अवस्थाओं के अनुरूप व्यवस्थित होने में असुविधा होती थी पर वे बड़े ही निर्विकार रूप से अवस्थाओं के अनुरूप स्वयं को ढ़ाल लेते थे। एक घटना याद आती है, उस समय वे संघ के सह-सचिव थे। रामकृष्ण-विवेकानन्द-भावप्रचार परिषद के प्रत्येक कार्य में उनका शुरू से ही उत्साह रहा।एक बार वे एक आश्रम में गये थे। वहाँ तय हुआ कि आश्रम में होने वाले सम्मेलनादि कार्यक्रम आश्रम से काफी दूरी पर स्थित एक ग्राम में होंगे। प्रवक्ताओं ने कार्यक्रम में पूज्य महाराज जी को भी आमन्त्रित किया। उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से उस समय उपस्थित रहने का प्रस्ताव स्वीकार किया। प्रातः वहाँ पहूँचना होगा और वापसी शाम को होगी। उन्हे दोपहर में भोजन हेतु जिस स्थान का चयन किया गया था, वह था परित्यक्त एक 'गौशाला'। उसे साफ-सुथरा करके उनके दोपहर के विश्राम की व्यवस्था भी वहीं की गयी थी। जो-जो संन्यासी साथ में गये थे, उन्होंने ऐसी विचित्र सी व्यवस्था को देख कर आयोजकों को अच्छे से डाँट भी पिला दी। महाराजजी किन्तु निर्विकार से ही थे। किसी प्रकार की कोई असुविधा हुई हो, ऐसा कोई उनके हाव-भाव से समझ ही नहीं पाया और बड़ी ही शान्ति से पूरी दोपहर, भोजन एवं विश्राम पर्यन्त वहीं रहे।

और उनके असीम धैर्य की तो बात ही क्या ! सभी की बातें वे धैर्यपूर्वक सुनते, किन्तु प्रत्युत्तर अल्प ही होता। कहीं ट्रेन, प्लेन में जाना हो, तो जितना देरी कर सकते थे वे करते, और यही उनका एक अभ्यास भी बन गया था। हम लोग उनको अपना धीरज खोकर बहुत बार बुलाने जाते पर वे किसी भी प्रकार की कोई हड़बड़ी नहीं दिखाते और निर्विकार रूप से अपने कार्यों में

लगे रहते। ऐसी देरी के अभ्यास में कभी ऐसा नहीं सुनने में आया कि उनकी ट्रेन या प्लेन यात्रा स्थगित हो गयी हो, वे ठीक समय पर उपस्थित हो ही जाते।

उनका दैनन्दिन जीवन बड़ा ही सुनियन्त्रित रहता। दिन भर में जो भी उनके करणीय कार्य होते, बिना छोड़े सब विधि पूर्वक सम्पन्न करते। इतनी व्यस्तता के बीच भी वे नियमित रूप से जप-ध्यान करते। संघ के महत कार्यों में व्यस्त रहने के कारण यदि जप-ध्यान के लिए समय नहीं भी रह पाता तो भी उनकी निष्ठा इतनी प्रगाढ़ थी कि वे आसन पर अवश्य ही बैठते और उपासना पूर्ण करते। जप-ध्यान नियमित रूप से करते।

उनके चरित्र का एक और वैशिष्ट्य था - शिष्टाचार। उनके जीवन-काल के अन्तिम समय में शारीरिक अस्वस्थता के दिनों में भी उनका यह चरित्र विस्मित कर देता था। ऐसे समय में जब हम लोग उनसे मिलने जाते, वे अपने सेवक को हम लोगों को बैठने हेतु कुर्सी देने हेतु इशारा करते। और सर्वोपरी था अद्भुत सौजन्यताबोध से भरा उनका हंसमुख चेहरा।

अन्त में एक घटना के साथ अपनी लेखनी को विश्राम दूँगा। उस समय स्वामी हिरण्मयानन्दजी महाराज रामकृष्ण मठ और मिशन के महासचिव और स्वामी गहनानन्दजी महाराज सह-सचिव थे। उस समय एक कार्य हेतु उन्हें त्रिवेन्द्रम आश्रम में जाना पड़ा। इन्हीं कार्यों के बीच समय निकाल कर वहाँ के अध्यक्ष स्वामीजी के साथ तीर्थक्षेत्र कन्याकुमारी दर्शन हेतु गये। वापसी के समय रास्ते में हठात् उनकी गाड़ी का ब्रेक-फेल हो गया। चालक किसी भी प्रकार से गाड़ी को नियन्त्रण में नहीं ला पा रहा था। रास्ते के एक तरफ बड़े वृक्षों की कतार और एक तरफ सामने से आने वाले द्रुत-गति के वाहन, ऐसे में सभी के लिए भयावह स्थिति थी। स्वामी हिरण्मयानन्दजी बोलते हैं, हम सभी उस समय विभ्रान्त हो रहे थे। और मेरे पास बैठे थे गहनानन्द, बिल्कुल स्थिर हो कर बैठे थे। कोई भी उद्वेग उनमें देखने को नहीं मिल रहा। ईश्वर

की इच्छा रही कि अचानक गाड़ी एक स्थान पर जाकर थम गयी। सभी की प्राण-रक्षा हुई। परवर्ती काल में इस घटना का उल्लेख करते हुए स्वामी हिरण्मयानन्दजी बोलते - गहनानन्द खूब जप-ध्यान करता है ना। (अर्थात स्वामी गहनानन्द साथ में थे और उस दिन उनकी जप-ध्यान निष्ठा की शक्ति के कारण ही वे निश्चित सी लगने वाली दुर्घटना से गाड़ी में बैठे लोग मौत के मुख से बच गये।)



स्वामी गहनानन्दजी महाराज की कुछ स्मृतियाँ

परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गौतमानन्दजी महाराज
सह संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ

स्वामी गहनानन्दजी महाराज के साथ मेरी पहली मुलाकात १९५६-५७ साल में रामकृष्ण मिशन, नई दिल्ली में हुई थी। उस समय मैं उस आश्रम का एक ब्रह्मचारी था। रामकृष्ण संघ में आये अभी कुछ समय ही हुआ था। स्वामी गहनानन्दजी हरिद्वार या ऋषिकेष में कुछ दिन तपस्या करके लौटे थे। आश्रम में जब उनके कमरे में मिलने का अवसर मिला तब उन्हें बड़ा ही अमायिक और सबके साथ मिलनसार स्वामीजी जैसा ही प्रतीत हुआ। उन्होंने मेरा शारीरिक और मानसिक कुशलक्षेम भी पूछा। बेलूड़ मठ में ब्रह्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र में रहने के अन्तराल में हालांकि सन् १९६०-६२ में बहुत बार ही उन्हें देखना हुआ पर कोई हृदयस्पर्शी वार्तालाप नहीं हुआ।

फिर सन् १९७६ से १९८९ साल तक, जब मैं अरूणाचल प्रदेश के आलोंग केन्द्र में अध्यक्ष पद पर कार्यरत था तब उनके साथ कई बार मिलना हुआ। उस समय जब उस केन्द्र का विद्यालय उच्च माध्यमिक विद्यालय में परिणत हुआ था तब स्वामी प्रभानन्द के साथ सुदूरवर्ती केन्द्रों में उन्होंने दौरा किया था। तब स्वामी प्रथमानन्द (प्रीति महाराज) के साथ हम तीन स्वामीजी अरूणाचल प्रदेश के कामेंग जिला के तवांग के १०,५०० फुट ऊँचे अवस्थित पृथ्वी के सबसे बड़े बौद्धमठ को देखने गये थे। इस मठ में कई सौ संन्यासी और संन्यासीनियाँ रहते हैं। आयु में उस समय वे ७० वर्ष के आस पास थे और हम लोगों के दल में सबसे अधिक आयु के व्यक्ति थे, किन्तु शारीरिक अवस्था में सबसे

अधिक सक्षम थे। तवांग और बोमडिला इत्यादि स्थानों के रास्ते में जो भी अध-पका भोजन मिलता था उसे ग्रहण कर वे सन्तुष्ट ही थे। मैं, उस समय उनके समक्ष युवक ही था, पर उस प्रकार के साधारण भोजन से सन्तोष नहीं कर पाता था। वे मुझे उत्साह देते हुए बोले, ''सोचो कि तुम ऋषिकेष में हो और तपस्या कर रहे हो। तभी तुम इस प्रकार के भोजन से पूर्णतया तृप्त हो पाओगे।'' बोमडिला में उस समय बहुत ही ठण्ड थी, वहाँ का तापमान ८-१० डिग्री सेल्सियस हो गया था, फिर भी देखा कि इस ठिठुरती ठण्ड में भी वे स्वामी प्रभानन्दजी के साथ संघ के कुछ महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा कर रहे थे। प्रभानन्दजी मुझसे हंसी में बोले ''जितनी रात गम्भीर होती जाती है उतनी ही उनकी चिन्ताशक्ति और कार्यक्षमता बढ़ती जाती है।'' वास्तव में परवर्ती समय में ऐसा ही देखने को मिला था, गहनानन्दजी रात १० बजे से मध्यरात्रि पर्यन्त पंक्तिबद्ध होकर आए सभी आगन्तुकों, विभिन्न शाखा केन्द्रों के प्रधान स्वामीजी लोगों से, ब्रह्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र के अध्यक्ष आदि के साथ मिलकर वार्तालाप करते, उन्हें अनेकानेक आवश्यक निर्देश देते और अपने कार्यालय के विभिन्न कार्यों को भी करते, उस समय न केवल वे बेलूड़ मठ के सह महासचिव थे पर साथ ही सेवा प्रतिष्ठान जैसे वृहत चिकित्सालय के सचिव पद पर भी कार्यरत थे। एक साथ इतने गुरु दायित्वों का भार वे अपने कन्धों पर कैसे ले सकते थे, यह सोच कर बड़ा ही अद्भुत लगता है !

शाखा केन्द्र के अध्यक्ष होने के कारण बहुत बार ही उनके पास अपने केन्द्रों के लिए अतिरिक्त साधुकर्मी पाने के लिए प्रस्ताव करना पड़ता था। उस समय वे सभी केन्द्रों में साधुकर्मियों की नियुक्ति करने के दायित्व का भी निर्वाह कर रहे थे। उन्नत और दक्ष साधुकर्मी तैयार करने हेतु वे प्रायः ही हम लोगों को उपदेश देते रहते थे कि केन्द्रों में निश्चित समय पर शास्त्रपाठ एवं अध्ययन चलता रहे और आध्यात्मिक साधना में नियमितता के

प्रति वे उत्साह देते रहने को कहा करते थे। हमारे केन्द्रों में साधुकर्मियों की समस्याओं का यही उनकी ओर से सर्वश्रेष्ठ समाधान रहता था। १९९७ साल, स्वामी विवेकानन्द के भारत प्रत्यावर्तन का शत वार्षिकी वर्ष था, मठ और मिशन के सभी केन्द्रों में और राष्ट्रव्यापी अनुष्ठानों हेतु कार्यक्रमों की रूपरेखा बन रही थी। उस समय पूज्य स्वामी गहनानन्दजी महाराज मद्रास में ही आए हुए थे। जिस किसी कारण से ही हो इस अनुष्ठान के उपलक्ष में हमारे प्रधान कार्यालय से कार्यक्रमों की रूपरेखा पर गुरुत्वपूर्ण दिशा-निर्देश नहीं आ पाए थे। उन्होंने तमिलनाडू के कुछ केन्द्रों के अध्यक्षों को चेन्नई मठ बुलाकर आवश्यक दिशा-निर्देश दिए और उत्साह देते हुए बोले, "इस उपलक्ष में तुम सभी तमिलनाडू में मिल जुलकर अपनी-अपनी सामर्थ्यानुसार बड़े स्तर पर स्वामीजी के नाम की ज्योति जगाओ।" उनके आशीर्वाद और उपदेश से तमिलनाडू के सभी केन्द्रों के प्रधान स्वामीजी लोगों को उत्साह मिला। उन्होंने अपनी सारी चेष्टाओं और सामर्थ्य के साथ इस कार्य हेतु अपनी कमर कस ली। १९९७ साल तमिलनाडू में अनुष्ठित अति उच्चभाव समन्वित वह उत्सव आज एक स्वर्णिम इतिहास का रूप ले चुका है। इस अनुष्ठान का प्रभाव केवल मात्र तमिलनाडू के जन साधारण तक ही पहुँचा हो ऐसा नहीं अपितु स्वामी विवेकानन्द की शिक्षाओं के प्रति विभिन्न राष्ट्व्यापी स्तरों पर भी उसकी अमित छाप पड़ी और सभी उस ओर कार्य करने के लिए तत्पर हुए।

मुझे और भी याद आ रहा है, मध्यप्रदेश में भक्तों द्वारा परिचालित तीन आश्रम-जबलपुर, विलासपुर और भिलाई में जब उनका पदार्पण हुआ। वे जबलपुर में नवनिर्मित मन्दिर के प्रवेश द्वार के उद्घाटन के उपलक्ष में पधारे हुए थे। इस पुण्य-बेला पर वहाँ बहुत से साधुओं का भी समावेश हुआ था। उन लोगों ने वहाँ निकटवर्ती नर्मदा नदी के जलप्रपात में स्नान करने की इच्छा प्रकट की। गहनानन्दजी भी बहुत उत्साही थे। यथा समय हम सभी वहाँ

स्नान के लिए पहुँच गये। वहाँ प्रपात का जलस्तर कमर पर्यन्त था। उसमें भी सभी साधुगण स्नान के लिए उतर गये। हम सभी को बड़ा ही आश्चर्य हुआ कि इस आयु में भी पूज्य गहनानन्दजी महाराज हम सभी को उत्साहित करते हुए पानी में उतर पड़े। 'नर्मदे हर', 'नर्मदे हर', 'नर्मदे हर-हर' का स्वर गूँजने लगा। यह उनका अपने संघ के साधु लोगों के प्रति प्रेम-प्रदर्शन का निर्देश करने वाली घटना थी। इसे उनके स्वभाव का वैशिष्ट्य ही कहा जा सकता है।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि हम सभी को उनके व्यक्तित्व में स्मरण हो आता है सभी साधुओं के साथ मधुर वार्तालाप और हृदय-स्पर्शी सद्व्यवहार। व्यक्तिगत स्तर पर मेरा हृदय सर्वदा ही उनके अमायिक स्वभाव के कारण श्रद्धा से पूर्ण हो जाता है। वे बड़े ही शान्तभाव से वार्तालाप करते थे, किन्तु उसके बीच कोई भी उनकी दृढ़ता को भी अनुभव कर सकता था। मेरे लिए उनका ऐसा अमायिक और हृदय-स्पर्शी सदव्यवहार चिरस्मरणीय ही बना रहेगा।



स्वामी गहनानन्दजी महाराज के जीवन की कुछ झलकियाँ

परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी प्रभानन्दजी महाराज
सह संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ

मैं बड़ी विनम्रता, एवं श्रद्धापूर्वक पूज्यपाद स्वामी गहनानन्दजी महाराज के सम्मान में अपनी श्रद्धा अर्पित करता हूँ।

१९५९ में मैं पहली बार पूज्य स्वामी गहनानन्दजी महाराज के सम्पर्क में आया था। मेरा पूजनीय स्वामी शान्तानन्दजी महाराज से मिलने के लिए राँची सेनेटोरियम जाना हुआ था, उन्होंने मुझे सेवा प्रतिष्ठान में अपनी बीमारी के इलाज के लिए भर्ती पूज्य स्वामी वेदान्तानन्द जी महाराज को कुछ संदेश देने के लिए कहा था, इसी कार्यवश मेरा सेवा प्रतिष्ठान जाना हुआ था। उस समय, स्वामी गहनानन्दजी महाराज सेवा प्रतिष्ठान के सहायक सचिव थे। तभी से मुझे विभिन्न कारणों से पूज्य महाराजजी से मिलने का सौभाग्य मिलता रहा। मैं अपने आपको सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे पूज्य महाराजजी के मार्गदर्शन में साढ़े चार साल तक सेवा प्रतिष्ठान में कार्य करने का अवसर मिला और उसके बाद रामकृष्ण मठ एवं मिशन के मुख्यालय में उनके सहयोगी के रूप में कार्य करने का भी अवसर मिला। उन्हें बहुत ही पास से देखने के अवसर मिले और जब केन्द्रों में था तब वहीं से उनके सम्पर्क में बना रहता था।

उनके चारित्रिक व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य आकर्षक था। जिसे स्पष्ट देखा जा सकता था। यदि उनकी इन विशेषताओं के साथ हम अच्छी तरह परिचित नहीं हैं तो उनके चरित्र का वैशिष्ट्य समझने में भूल रहने की सम्भावना रह सकती है। प्रारम्भ में ही बोल देता हूँ कि मैं उनकी सन्तुलित जीवनचर्या का साक्षी बन

आश्चर्यचकित ही हूँ। सेवा प्रतिष्ठान के अन्तर्विभाग में ५५० रोगियों की एवं कई हजार बाहूय विभाग के रोगियों की विभिन्न समस्याओं को सम्भलाते हुए वे अपने दैनिक कार्यों में कितना ही दबाव में रहते होंगे किन्तु अपनी सधी हुई दिनचर्या का जिस तरह से पालन करते देखने-सुनने वाला कोई भी व्यक्ति उनकी प्रशंसा किये बिना रह नहीं सकता, उसमें हम सभी को सीखने और समझने के लिए बहुत कुछ है। इन सब अस्त-व्यस्त परिस्थितियों में भी उनका जीवन धीर-स्थित भाव से पूर्ण रहता। सेवा प्रतिष्ठान की जिम्मेदारियों के अतिरिक्त, उन्हें १९६५ में मठ के प्रन्यास और मिशन के शासी निकाय के सदस्य के रूप में चुना गया था। इस सन्दर्भ में वे मठ और मिशन के दायित्वों के साथ-साथ विभिन्न केन्द्रों के दायित्वों से भी जुड़े थे। इसके अतिरिक्त वे कई निजी शासनों के अन्तर्गत चलने वाले आश्रमों की भी सहर्ष सहायता करते थे। इन सब के बीच में, वे अपने दैनिक माामलों में इतने संयमित एवं सन्तुलित रहते थे कि उन्होंनें अपनी जिम्मेदारियों को एक शान्त और रचनात्मक ढंग से बखूबी निभाया है। कभी भी कार्यों में आक्रमकता एवं चिन्ता के कोई संकेत उनमें देखने को नहीं मिलते थे, अपितु उनके व्यवहार में सभी के लिए सहानुभूतिपूर्ण विशाल हृदय एवं सभी परिस्थितियों में उनका व्यापक दृष्टिकोण परिलक्षित होता था। ऐसा कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि उन्हें हमेशा मठ और मिशन के एक स्वतन्त्र, प्रेरणादायक संन्यासी के रूप में याद किया जाता रहेगा।

मैं आपको एक घटना बताता हूँ जो उनके इस व्यक्तित्व को दर्शाता है। मैं सेवा प्रतिष्ठान में कर्मी के रूप में कार्यरत था, उस समय वे एक दुर्घटना के शिकार हो गये थे, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें स्लिप-डिस्क (रीढ़ की हड्डी का खिसक जाना) हुआ, उसकी नियमित परीक्षणों और रिपोर्टों के माध्यय से यह पुष्टि हुई कि इस दुर्घटना के परिणामस्वरूप उनके शरीर का एक तरफ का हिस्सा आंशिक रूप से लकवाग्रस्त हो गया। स्वामी दयानन्दजी जो कि

वहाँ के सचिव थे, उन्हें बहुत स्नेह करते थे, उनकी इस दुर्वस्था के कारण बहुत ही बेचैन हो उठे थे। तदनुसार निर्णय लिया गया कि उनकी चिकित्सा प्रसिद्ध सर्जन डॉ. एम.एल.चटर्जी की देखरेख में की जाएगी। लेकिन सेवा प्रतिष्ठान के ही उनके छात्र डॉ. विश्वजीत सेन इस फैसले के पक्ष में नहीं थे बल्कि परम्परागत निर्धारित उपचार के पक्ष में थे। इस अवधि के दौरान, स्वामी दयानन्दजी महाराज प्रायः ही बैचेन रहते क्योंकि गहनानन्दजी महाराज को लम्बे समय तक बिस्तर पर ही चिकित्साधीन रहना पड़ रहा था। लेकिन इन सब के बीच गहनानन्दजी महाराज सदैव उनके सामान्य स्वःस्वरूप में शान्त, आत्मकेन्द्रित, धीर और स्थिर ही बने रहते थे। वे डा. विश्वजीत सेन द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन बड़ी ही तत्परता से कर रहे थे। उनकी इस अनुशासनप्रियता को एक दृष्टांत के रूप में ही देख सकते हैं। जब भी वे मन्दिर श्रीश्रीठाकुर को प्रणाम करने के लिए जाते थे, अपनी रीढ़ की हड्डी का विशेष ध्यान रखते और इसे जितना सम्भव हो सकता था, प्रणाम करने के समय में धीरे-धीरे करते और अपने को पूरा सीधा रखते। यह दृश्य देखने योग्य होता था।

उनके दैनन्दिन जीवन के विभिन्न आचार-व्यवहारों के बीच उनके मनोनिवेश पर विशेषतः लक्ष्य किया जा सकता है। ईश्वरीय भक्ति और एकाग्रता का अभ्यास एक उल्लेखनीय विषय था जिस पर वे गुरुत्व देते थे। हम लोग जानते हैं कि अभ्यास और वैराग्य, ये दोनों साधन ही प्रत्येक साधु के जीवन में बड़ा ही गुरुत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, जो आध्यात्मिक पथ पर प्रगति की आशा रखते हैं, उन्हें भी इन दोनों पर विशेष दृष्टि देनी पड़ती है। इन दोनों में आत्मस्थ हो जाने पर सारा जीवन ही इनका पालन करने की चेष्टा करते रहना वांछनीय होता है। कई बार मैंने उनको कहा था, “महाराज, आप इतना परिश्रम कर रहे हैं, आपका तनिक भी विश्राम नहीं हो पा रहा है।” लेकिन वे चुप ही रहते, उत्तर नहीं देते थे। एक दिन उन्होंने मुझे कहा, “तुमने ग्रीस

देश के एक युवक की कहानी सुनी ही होगी। उसके पास एक बछड़ा था जिसे वह पूरे दिन अपने कन्धे पर लादे फिरता था। समय के साथ, बछड़े का वजन बढ़ा और धीरे-धीरे वह आकार में भी बड़ा हो गया, फिर भी वह युवक उसे अपने कन्धों पर बड़ी खुशी से और आसानी से लिए फिरता था, वह ऐसा करने में अभ्यस्त हो गया था।'' इस घटना को उनसे मैंने कई बार सुना। केवल मुझे ही नहीं अपितु कईयों ने उनसे इस घटना को सुना। मुझे याद है, एक बार मैंनें उनसे कहा, ''महाराज, इसकी कोई तो सीमा भी होनी चाहिए।'' उन्होंने उत्तर दिया, "देखो, हम बहुत बार ऐसा अनुमान लगा लेते हैं कि हम नहीं कर पाएंगे, लेकिन निडरता से जब हम उसमें अग्रसर होते हैं तो, हम देख पाते हैं कि हम इसे सफलतापूर्वक करने में सक्षम हैं।"यही विश्वास ही उनकी सफलता का मंत्र था और इसी पर वे मजबूती के साथ दृढ़ रहकर बहुत कुछ कर गये। हालांकि कई बार उनकी इसी मानसिकता के कारण कई अप्रिय परिस्थितियों का भी सामना करना पड़ा था। उनकी इस स्लिप डिस्क का कारण भी यही कहा जा सकता है। एक बार सुबह स्नान करने के समय स्वयं ही पानी से भरी बाल्टी को खिसकाने के चक्कर में दुर्घटनाग्रस्त हो गये। उन्होंने अपनी कमर की इस चोट की उपेक्षा की और अपने नियमित कर्त्तव्यों के साथ आगे बढ़ते हुए तत्काल राहत-कार्य का निरीक्षण करने राणा घाट चले गये। उनके साथ स्वामी पुण्यानन्दजी भी थे। लम्बा रास्ता था, और ऐसी चोट में भी सब सहन करते हुए उन सब कार्यों की ओर अपना ध्यान लगा दिया। लगभग ६ बजे सेवा प्रतिष्ठान वापिस लौटने पर उन्होंने पाया कि वे अब सीढियां नहीं चढ़ पा रहे है। उनके शरीर के एक हिस्से ने लगभग कार्य करना बन्द ही कर दिया था। चोट की अनदेखी करते हुए, उन्होंने पूरे दिन कड़ी मेहनत की थी और अब यह अस्वस्थता के परिणाम के साथ अपने चरम शिखर पर थी। उनके साथ एक या दो ऐसी घटनाएं घटीं पर उनकी ऐसी कड़ी मेहनत की भावना

और अपने स्वास्थ्य की उपेक्षा की मानसिकता से उन्हें किसी भी प्रकार हिला न सकीं। उनका यह गुण बहुत ही प्रेरणादायक था और हमें लगता है कि अगर हम अपने स्वयं पर नियन्त्रण पाने की कोशिश करते हैं तो हमारे डर से, सोचते हैं कि कर नहीं पाएंगे या आवश्यकता से अधिक कर जाने पर कहीं किसी विपदा को आमन्त्रित न कर बैठें, आदि विचार हमको संकुचित कर देते हैं। किन्तु महाराजजी की तरह यदि परिस्थितियों का साहसपूर्वक सामना करते हैं, तो दिन के अन्त में हम अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने से अधिक दूर नहीं होंगे और अपने जीवन को और अधिक सक्रिय बना पाएंगे।

उनमें प्रेरणादायक आश्चर्यजनक और असाधारण गुण था कि वे स्वयं को कैसी भी परिस्थिति हो उसके अनुसार वे स्वयं को ढाल सकते थे। हम लोग आमतौर पर असुविधा होने पर बैचैन हो उठते हैं और सुविधा के आयोजन की चेष्टा करते हैं और विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों से बचने और परेशानी के दौरान उससे पलायन करने के मार्ग का पता लगाने की कोशिश करते हैं। ऐसी परिस्थिति में स्वयं को अनुकूल बनाने का प्रयास ही नहीं करते हैं। इस सम्बन्ध में कहना होगा कि स्वयं को अनुकूल बना डालने की उनमें असाधारण क्षमता थी।

मुझे याद है कि एक बार मैं उनके साथ बॉमडिला गया था। बॉमडिला से आगे बढ़कर हम तवांग मठ तक जाने के रास्ते पर थे। इस यात्रा का एकमात्र उद्देश्य यह पता लगाना था कि क्या अरूणाचल प्रदेश में एक और स्कूल स्थापित करना सम्भव होगा। एक वरिष्ठ सरकारी अधिकारी भी हमारे साथ थे। कुछ भूखण्डों की खोज के बाद हमने अंततः नदी के निकट के एक स्थान को चुना। इस यात्रा के दौरान, हमें ऐसी जगहों पर भी रूकना पड़ा, जहाँ विश्राम हेतु उपर्युक्त स्थान नहीं था। प्रीति महाराज हमारे साथ थे। मैंने कहा, ''यहां इतनी हाड़ कम्पा देने वाली ठंड है कि यहाँ कोई कैसे रह सकता है'' ऐसी बहुत सी असुविधाओं की मैंने

शिकायत की, हैरानी की बात यही थी कि उन्होंने इसके बारे में एक शब्द भी नहीं कहा और न ही उन्होंने कभी किसी अन्य वस्तु की अपर्याप्तता के बारे में शिकायत की। परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को उपस्थित कर लेना उनके लिए इतना ही सरल था। वे प्रायः ही सलाह देते कि जहां उपस्थित परिस्थितियों में पर्याप्त सम्भावनाएं बनती हैं और हम खुद को थोड़ा बेहतर बना सकते हैं तो क्यों न उस क्षेत्र में परिस्थितियों के अनुरूप आचरण में ही स्वयं को ढ़ाल लें। ऐसा मैंने उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में करते हुए देखा। किसी भी परिस्थिति में वे चंचलता या अधैर्य को हावी नहीं होने देते और स्वयं को उसके लिए अनुकूल बना लेते। यह अवश्य ही दर्शनीय होता। अपने जीवन में उनके इस प्रकार के अद्भुत व्यवहारों को देख कर अनेकों बार मुझे अवाक् होना पड़ा था।

उनके और दयानन्दजी महाराज के बीच अद्भुत सम्पर्क को भी देख कर विस्मित होना पड़ता था। दयानन्दजी ने उन्हें स्वयं ही चयन किया था और सेवा प्रतिष्ठान के सफल संचालन हेतु सर्वोत्तम भावेन प्रशिक्षित किया। वृद्धावस्था में दयानन्दजी सेवा प्रतिष्ठान की जिम्मेदारियों से सेवानिवृति ग्रहण कर वहीं साधुनिवास के एक कक्ष में रहने लगे। मैंनें देखा कि गहनानन्दजी अस्पताल के दिन भर के मामलों की जानकारी दयानन्दजी को देते और दयानन्दजी भी विभिन्न मुद्दों पर अपने अनुभव एवं सलाह देते रहते थे। वृद्ध साधुओं के प्रति जो सम्मान देते वह मेरे लिए व्यक्तिगत रूप से हृदयस्पर्शी था।

एक बार त्रिवेन्द्रम से कन्याकुमारी की यात्रा की बात है जिसे मैंने उनके सह-यात्री हिरणमयानन्दजी से सुना था। उस यात्रा में उनके अलावा गहनानन्दजी और एक अन्य संन्यासी जो मेजबानी कर रहे थे, गाडी में साथ में थे। अचानक उनकी कार के ब्रेक में खराबी आ गयी और विपरीत दिशा से द्रुत गति से आ रही कार से हम लोगों की टक्कर होने की आशंका बढ़ गयी। चालक ने घबराकर ब्रेक-फेल होने की चेतावनी दी, और कार के बाहर दोनों यात्री,

जान बचाने के लिए कूद गये। किन्तु गहनानन्दजी “जय रामकृष्ण” मुख से उच्चारण कर स्थिर ही थे। दुर्घटना टल गयी। बाद में बेलूड़ मठ आने पर हिरणमयानन्दजी ने कहा था, “मुझे नहीं पता था कि नरेश सब समय जप करता है। अनायास जिस तरह से उन्होंनें “जय रामकृष्ण” कहा था; मुझे लगता है हर घड़ी जप करता है।”

मैंने भी एक बार स्वयं देखा है। एक गाड़ी में हम तीन लोग थे, महाराज, मैं और अन्य एक संन्यासी, त्रिपुरा में उदयपुर के रास्ते से किसी ग्राम की ओर जा रहे थे। अगरतल्ला से हमारी यात्रा शुरू हुई। रास्ते में देखा कि पीछे से एक कार लगातार हॉर्न मार रही थी। रोड़ पर पर्याप्त स्थान रहने पर भी पीछे की गाड़ी वाला हॉर्न क्यों मार रहा है यह हम लोग समझ नहीं पा रहे थे, आखिरकार उस वाहन चालक ने हमें पार किया और गाड़ी एकदम सामने लाकर रोक दी, बाध्य हो कर हमें भी अपनी गाड़ी को रोकना पड़ा। उस वाहन चालक ने हड़बड़ी में हमें निर्देश दिया, “जल्दी नीचे उतरो, आपकी गाड़ी में आग लग गई है।” मैं और दूसरे आगत संन्यासी परेशानी में पड़ गए, लेकिन महाराजजी में भयग्रस्त होने का कोई संकेत प्रकट नहीं हुआ। जैसे ही कार ने ब्रेक लगाया, महाराजजी ने “जय रामकृष्ण” की ध्वनि दी और नीचे उतर गये। यह मेरे लिए एक बड़ा सबक था और मुझे एहसास हुआ कि जब भी वे चुपचाप बैठे हैं, वे निश्चित ही जप कर रहे हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं था। श्रीश्रीठाकुर-माँ-स्वामीजी पर एकान्त निर्भरता के सम्बन्ध में हम कितना कुछ सुनते हैं, उसे अपने जीवन में विकसित करने के लिए कितना कुछ करते हैं। महाराजजी को विभिन्न अवस्थाओं में, बेलूड़मठ, सेवा प्रतिष्ठान और अन्य स्थानों में प्रत्यक्ष देखा कि वे श्रीश्रीठाकुर-माँ-स्वामीजी पर पूर्ण निर्भर रहते, उसमें उनकी ओर से जरा सी भी कमी न थी।

और एक घटना मुझे याद हो आई। उस समय सेवा प्रतिष्ठान के कर्मी के रूप में वहाँ पर कार्यरत था। प्रतिष्ठान की आर्थिक

अवस्था अच्छी नहीं थी। हर महिने सभी कर्मचारियों को देने योग्य वेतन कहाँ से आयेगा ? यह एक चिन्ता का विषय था। प्रत्येक महीने की २०-२१ तारीख को यही एक चिन्ता का विषय होता था। ऐसे समय में मठ एवं मिशन के एक मित्र से एक बड़ी राशि उधार ली जाती, और अगले महीने उसका भुगतान कर उधार का भुगतान कर दिया जाता। किन्तु इस प्रकार उन सज्जन मित्र पर कितने दिन और निर्भर रहा जा सकता था ? इसलिए बीच-बीच में मैं उनसे यही कहता रहता, ''महाराज, कोई एक व्यवस्था करनी चाहिए'' वे बोलते, ''ठीक कहते हो, भय किस बात का ? इतनी चिन्ता क्यों करते हो ? श्रीश्रीठाकुर-माँ-स्वामीजी का प्रतिष्ठान है, इतनी चिन्ता न करो।'' वे विश्वास के साथ बड़ी ही सरलता से ऐसा कहते पर मेरी चिन्ता का निवारण नहीं हो पाता। ऐसी ही परिस्थिति में एक दिन एक घटना घटी। आप सभी को याद होगा, सरकार की तरफ से उस समय अघोषित आय की जाँच हो रही थी और एक सूचना के अनुसार अघोषित आय को घोषित आय बनाने हेतु बहुत से लोग छुपे हुए धन को समय सीमा में ठिकाने लगाने की उधेड़-बुन में लगे थे। एक दिन एक सज्जन व्यक्ति जो कि किसी बड़े व्यापारिक प्रतिष्ठान के उच्च पदस्थ अधिकारी ही थे, मुझसे मिलने के लिए उपस्थित हुए। उस समय मैं महाराजजी के सामने वाले कक्ष में अपने कार्यालय में बैठता था। उसी कक्ष में उन्हें ले गया। वे अपना सूटकेश जिसमें रूपये थे, साथ में लाए थे। बोले, ''पचास हजार रूपये हैं। इसे आप लोग रखिये।'' मैंने दानदाता के नाम और पते का ब्यौरा माँगा। पर वे देने को राजी नहीं हुए। तब मैंने उन्हें कहा, ''आप लिख नहीं पा रहे हैं, कोई बात नहीं, बोल दीजिए, मैं लिख लेता हूँ।'' इस पर भी वे राजी न थे। सज्जन व्यक्ति मुझसे पूछने लग, ''क्यों, क्या असुविधा है?'' बहुत से उदाहरण उन्होंने दिये। फिर बोले, ''ये पास ही तो भारत सेवाश्रम संघ है, आप नहीं लेते हैं तो मैं वहाँ जाता हूँ।'' मैंने विनम्रभाव से ही उन्हें उत्तर दिया, ''आप वहाँ जाने के लिए

स्वतन्त्र हैं।'' इस ओर मेरे मन में दुश्चिन्ताएं उथल-पुथल कर रही थीं कि महीने की २०-२१ तारीख तो पार हो चुकी है और वेतन का भुगतान करने के लिए रूपये चाहिए, सब व्यवस्थाएं कहाँ से होगी? अन्त में उस सज्जन व्यक्ति ने तिरस्कार स्वर में कहा, ''तुम बुद्धू हो।'' चुपचाप सब सुन लिया और उन्हें उनकी गाड़ी तक छोड़ आया। वे बड़ी महँगी गाड़ी से आए थे। इस घटना के बाद जब महाराजजी अपने काम से लौटे तो मैंने उन्हें इस घटना के बारे में बताया। सब सुनकर वे बोले, ''तुमने एकदम ठीक ही किया। तुमको तो मैं कहता ही हूँ, श्रीश्रीठाकुर-माँ-स्वामीजी यहाँ विराजित हैं, चिन्ता किस बात की है।" इस प्रकार के विश्वास के साथ प्रशासन व्यवस्था चलाना कोई साधारण बात नहीं कही जा सकती है।

और भी बहुत सी बातें उनके सम्बन्ध में बताई जा सकती हैं। एक घटना बताकर अपना वक्तव्य समाप्त करूँगा, मैंने प्रायः ही इसे देखा है, चिकित्सकों की सभा में हो अथवा उनके साथ जब वे अस्पताल में रोगियों को देखने जाते थे, चिकित्सकों की ओर इंगित कर वे कहते थे, ''जब रोगी का उपचार कर रहे हो तब मन ही मन यही सोचो कि तुम अपने किसी निकट के रिश्तेदार का ही उपचार कर रहे हो, देखोगे कि रोगी का उपचार भी अच्छे से कर पाओगे और रोगी का भी इससे उपकार होगा।'' यह बात उनसे कई बार मैंने सुनी। पर उनकी यह बात उस समय तक मेरे मन-मष्तिष्क को उतना प्रभावित नहीं कर पायी थी। इसी सन्दर्भ में एक घटना है।एक दिन एक सज्जन व्यक्ति जो कि एक सरकारी कार्यालय में ऊँचे स्थान पर पदस्थ थे। बीमारी की अवस्था में बहुत दिनों तक वे अस्पताल में भर्ती रहे थे। स्वस्थ हो जाने पर छुट्टी लेने के पश्चात मेरे पास विदाई की अभ्यर्थना एवं कृतज्ञता जताने के लिए कार्यालय में आए। उस समय एक चिकित्सक भी मेरे सामने बैठे थे। आश्चर्य की बात यह थी कि उन चिकित्सक के दिशा-निर्देशों में ही उस व्यक्ति का उपचार हुआ था। उस

सज्जन व्यक्ति ने चिकित्सक को भी कृतज्ञता ज्ञापन एवं धन्यवाद दिया। ऐसा देखकर उनका परिचय पाने की चिकित्सक में उत्कण्ठा जागी। परिचय होने पर यह पता चला कि वे व्यक्ति चिकित्सक के एक निकट के ही रिश्तेदार थे, किन्तु बहुत दिनों से कोई सम्पर्क नहीं था। चिकित्सक बोले, ''यह बात आपने मुझे पहले क्यों नहीं बताई?'' उन सज्जन व्यक्ति के चले जाने पर मैंने चिकित्सक महोदय से पूछा, ''आखिर क्या बात है जी? आप यदि उनसे पहले से परिचित होते तो क्या करते?'' ''ऐसा कुछ नहीं स्वामीजी, थोड़ी और अच्छी तरह से उनकी देख-रेख करता, और क्या?'' ये क्या बात हुई? मेरे मुख से अचानक ही निकल पड़ा, ''इतने दिनों से आज यह बात मुझे समझ में आई कि पूजनीय नरेश महाराज क्यों आप सभी चिकित्सकों को यह बात बार-बार बोलते थे कि रोगी की सेवा अपने सगे-सम्बन्धियों की सेवा मानकर ही किया करो।''

उन्हें हमने बहुत ही व्यावहारिक रूप में पाया। उनका यथार्थमुखी दृष्टिकोण था। जो भी समस्या हो उसे किस प्रकार सम्भाला जा सकता है? इस विषय में उनकी जो दूरदृष्टि थी, उसने हम सभी को प्राणवन्त किया। ऐसे ही एक-एक महापुरूष आते हैं और अपने जीवनपथ पर पालित मूल्यवान अभिज्ञता से हम सभी को प्रेरित कर चले जाते हैं। वे लोग जिस परम्परा को हम लोगों के लिए थाती के रूप में रख जाते हैं, उसे परवर्ती काल में हम सभी अनुसरण कर अपना जीवन धन्य करते हैं। उनके उपदेशों को आन्तरिक भाव से पालन कर ही हम अपनी श्रद्धान्जलि अर्पण कर पाएंगे। मैं प्रार्थना करता हूँ महाराज हम सभी को आशीर्वाद प्रदान करें, जिससे हम उनके दीप्तिवान जीवन द्वारा प्रेरित हो उन्नति लाभ करें।

(१६ नवम्बर, २००७ को बेलूड़ मठ में आयोजित स्वामी गहनानन्दजी महाराज की स्मरण सभा में बंगला में प्रदत्त भाषण का हिन्दी में अनुवाद स्वामी तत्परानन्दजी ने किया।)

स्वामी गहनानन्द

परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी शिवमयानन्दजी महाराज
सह संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के चतुर्दश अध्यक्ष, पूजनीय स्वामी गहनानन्दजी महाराज ने भुवनेश्वर रामकृष्ण मठ से अपना संघ एवं साधु-जीवन आरम्भ किया। परम्परा के अनुसार जैसा होता है, वे भी अन्य ब्रह्मचारियों की भांति ब्रह्मचारी नरेश के नाम से परिचित हुए। उस समय पूजनीय स्वामी निर्वाणानन्दजी महाराज भुवनेश्वर मठ के अध्यक्ष थे। उन्होंने उस समय भुवनेश्वर में बड़ी आयु के वरिष्ठ संन्यासी पूजनीय स्वामी शंकरानन्दजी महाराज की सेवा करने के लिए नरेश महाराज को कहा।

पूजनीय शंकरानन्दजी प्रातः नियमित भ्रमण करते थे। एक दिन भ्रमण करके आए, और अपने ओढ़ने की चद्दर को समेटे बिना, ऐसे ही फैला कर बिस्तर पर छोड़ दिया। सुयोग समझ कर उस दिन नरेश ने चद्दर को समेट कर अलमारी में रख दिया।

दूसरे दिन शंकरानन्दजी जब भ्रमण से लौटे और सदैव की ही भांति चद्दर उतार कर बिना समेटे रख दिए, नरेश महाराज पूर्व की भांति से उसे तह कर रखने के लिए जैसे ही प्रस्तुत हुए, वैसे ही शंकरानन्दजी अपने गुरु गम्भीर कण्ठ से बोल पड़े, ‘‘रहने दो, और काम बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है।’’ अनपेक्षित वाक्यों को सुनकर हतप्रभ से नरेश महाराज के हाथ से वह चद्दर छूट गयी और वे वहाँ से चले गये।

किन्तु वे हार मानने वाले नहीं थे। जब शंकरानन्दजी स्वयं चद्दर को समेट कर रख रहे थे, तब नरेश महाराज ने उसे बड़े ही मनोयोग से देखा। अगले दिन शंकरानन्दजी ने जब चद्दर उतारी तब नरेश महाराज ने उसे जैसा देखा था एकदम वैसा ही

ठीक तरह से मिला कर समेट दिया। इसके बाद शंकरानन्दजी ने उनके इस सेवा कार्य में कोई आपत्ति नहीं दिखाई।

इस चद्दर तह करने की घटना से गहनानन्दजी के जिस मनोभाव की अभिव्यक्ति प्रकट होती है, वही उनके जीवन की सफलता की कुँजिका कही जा सकती है। एक बार वे जिस किसी कार्य को करने की मन में ठान लेते, उसे धैर्य और अध्यवसाय के साथ, कितनी भी बाधा-विपत्तियों में से क्यों न गुजरता पड़ता, उसे दृढ़तापूर्वक समाप्त करके ही वे दम लेते।

शिलाँग आश्रम में जिन्होंने उनके पास अपने साधुजीवन की प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है, प्रायः ही ये साधुगण स्वयं के जीवन में पूज्य महाराजजी के दिशा-निर्देशों की अपूर्व भूमिका की बात मन में रख कर कृतज्ञतापूर्ण हृदय से उल्लेख करते हैं। परवर्तीकाल में तो सभी ने देखा है कि वे रामकृष्ण-संघ के ब्रह्मचर्य मन्त्रों के पालन पर विशेष महत्त्व देते थे।

सेवा प्रतिष्ठान अस्पताल में चिकित्सकों और अन्य कर्मचारियों के कुछ त्रुटिपूर्ण व्यवहारों को सुधार करने के लिए जब वे कहते तो उनके वार्तालापों में सुनने वाले यह समझ नहीं पाते थे कि महाराजजी तिरस्कार कर रहे हैं या घटना का विवरण दे रहे हैं। उनका शान्त अनुत्तेजित गम्भीर कण्ठस्वर ही उनके कार्यक्षेत्र में एक महान उपलब्धि का स्वरूप था।

गहनानन्दजी अपने प्रवचनों के बीच-बीच में सामने बैठे चंचल बच्चों को पहले कहानी सुना देते और बोलते कि इसका उत्तर तुम सोच कर रखो, प्रवचन के बाद तुमसे इसका हल पूछेंगे।

वेताल पच्चीसी से एक कहानी उद्धृत करते जिसका तत्कालीन प्रस्तुत कार्यों में सार्थक प्रयोजन भी रहता, और जिसे देखने-सुनने वाले सहयोगीगण भी बहुत आनन्द उठाते थे।

कहानी की भूमिका कुछ इस प्रकार है, एक व्यक्ति एक पद के लिए आग्रही था। किन्तु जब वह पद रिक्त हुआ और उस पर

नियुक्ति की प्रयोजनियता भी देखी गयी, तब उस पद के लिए आग्रही व्यक्ति किसी अन्य महत्वपूर्ण पद पर कार्यरत थे। इसलिए रिक्त पद की आपूर्ति उसके निकटस्थ पद पर आसीन व्यक्ति से ही कर दी गयी। कुछ समय पश्चात उस पद के आग्रही व्यक्ति को जब यह सूचना मिली तो उसने गहनानन्दजी से अनुनय-विनय करते हुए कहा कि पद रिक्त हुआ और उसकी नियुक्ति नहीं की गयी। तब गहनानन्दजी ने यह कहानी बताई, तीन व्यक्ति एक ही समय में एक कन्या को विवाह करने के लिए उपस्थित हुए। ठीक उसी समय वह कन्या साँप के काटने से मर गई। तब तीनों ही साँप का विष निकालने वाले ओझा को बुलाने जाते हैं। ओझा के सुझावों के अनुसार कन्या का अन्तिम संस्कार किया गया। उसके पार्थिव शरीर को चिताग्नि में समर्पित किया गया, अब दूसरे युवक ने उसकी अस्थियों को एकत्रित किया और तीर्थस्थानों में अस्थिकलश को जल में प्रवाहित करने के लिए जाता है। तीसरा युवक उसकी चिता के पास ही बैठा रहता है।

जो युवक ओझा को बुलाने के लिए गया, वह ओझा को लेकर आया और ओझा की चेष्टा से चिताभस्म से कन्या पुर्नजीवित हो उठी। और फिर से वही प्रश्न उपस्थित हुआ कि तीनों युवकों में से कन्या का पाणिग्रहण कौन करेगा ?

अब वेताल ने विक्रमादित्य से प्रश्न किया, कन्या को अब किससे विवाह करना उचित होगा ? विक्रमादित्य ने उत्तर दिया, साँप का विष उतारने वाले ओझा को जो बुला कर लाया और कन्या को मृत्यु से बचाया, उसने पिता का कार्य किया है। जिस युवक ने उसकी अस्थियों को तीर्थ-जल में प्रवाहित किया उसने पुत्र का कार्य किया है। इसलिए चिता के पास जो युवक बैठा था उसे ही कन्या से विवाह करना उचित जान पड़ता है।

गहनानन्दजी ने उस पद के इच्छुक व्यक्ति को सरलता से समझाते हुए कहा कि यह नियुक्ति भी राजा विक्रमादित्य के

सिद्धान्तों के अनुसार ही तो हुई है, जिसे वेताल ने भी मान लिया था।

पूजनीय गहनानन्दजी महाराज अपने कार्यों के प्रति निष्ठावान-व्यक्ति थे और तुलनात्मक रूप से अल्प वार्तालापों में कार्यो को सम्पन्न करने के धनी थे। परवर्ति जीवन में अवश्य ही उन्होंने वक्तृताएँ दी हैं जिनमें शिक्षा-मूलक बहुत सी बातों का समावेश रहता था।

वे उपनिषदों की कहानियाँ कहते। जिसमें विशेषतः छान्दोग्य उपनिषद में वर्णित श्वेतकेतु और उसके पिता आरूणि की घटना मुझे स्मरण हो आयी है। पिता आरूणि अपने पुत्र श्वेतकेतु जो कि दीर्घ बारह वर्षों तक शास्त्रों का अध्ययन कर अभी-अभी अपने गुरुगृह से वेदज्ञ बनकर लौटे, उनसे पूछते हैं, तुमने अपने श्रीगुरु से उस वेदाज्ञा के सम्बन्ध में जाना कि नहीं ?

''येन अश्रुतँ श्रुतँ भवति अमतँ मतम् अविज्ञातम् विज्ञातम् इति।'' कथँ नु भगवः स आदेशो भवतीति।।

(छान्दोग्य उपनिषद - अध्याय-६, खण्ड-१, श्लोक-३)

अर्थात - जिस ज्ञान के द्वारा अश्रुत श्रुत हो जाता है, अचिन्तित विषय सुनिश्चित हो जाता है और अनिश्चित विषय सुनिश्चित हो जाता है।

श्वेतकेतु पिता को पूछते हैं - यह आदेश कैसा है ?

''यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातँ स्वाद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्।''

(छान्दोग्य उपनिषद - अध्याय-६, खण्ड-१, श्लोक-४)

अर्थात - हे सोम्य ! जिस प्रकार एक मृतिका के पिण्ड के द्वारा सम्पूर्ण मृण्मय पदार्थों का ज्ञान हो जाता है कि विकार केवल वाणी के आश्रयभूत नाम-मात्र हैं, सत्य तो केवल मृत्तिका ही है।

इस प्रकार कार्य, कारण एक दूसरे में अनुस्यूत रहते हैं जिसे देखकर श्रुति ऐसा बताती है, सृष्टि के पहले एक अद्वितीय सत् था, उससे तेज उत्पन्न हुआ, तेज से जल, जल से अन्न और फिर पृथ्वी की सृष्टि हुई, इस प्रकार श्रुति के सिद्धान्त की ओर महाराजजी इंगित करते और समझाते कि अद्वितीय सत् अर्थात एक ब्रह्म ही इस बहुविचित्र जगत के अन्दर ओतप्रोत भाव से स्थापित है।

स्वार्थत्याग के सम्बन्ध में पूजनीय गहनानन्दजी एक विख्यात कहानी कहते, जिसे मेरे ज्ञान से उन्होंने ही प्रथम बार संघ में साधुओं को सिखाई। वे कहते, एक जैसी परिस्थिति है, किन्तु दो स्थानों में उसका फल एकदम विपरीत होता है। परार्थपरता और उसका अभाव ही इस फल का कारण है।

परिस्थिति कुछ इस प्रकार है -

भांति-भांति की स्वादिष्ट खाद्य सामग्री सजाई हुई है। किन्तु जो लोग खाने के लिए आमन्त्रित किए गये हैं, उन सभी के दोनों हाथ दो लोहे की छड़ों के समान हैं जो कि कोहनियों से मुड़ नहीं सकते हैं।

अब ऐसी परिस्थिति में क्या होता है देखें,

स्वार्थपरताः-

एक तरफ खाने-पीने की अच्छी-अच्छी वस्तुएँ सजी हुई तो हैं पर जिनके दोनों हाथ कोहनियों से मुड़ ही नहीं पा रहे वे पशुओं की तरह खाना खाने को बाध्य हैं और जैसे-तैसे चेष्टा कर रहे हैं, अपना मुख थाली में डाल कर जब खाना खा रहे हैं तो न तो अच्छे ढ़ंग से खा पा रहे हैं और न ही उसका ठीक-ठीक आनन्द उठा पा रहे हैं साथ ही बहुत सा खाना बाहर गिर कर नष्ट भी हो रहा है।

निस्वार्थता:-

एक ही परिस्थिति है पर दृश्य सम्पूर्ण भिन्न है। यहाँ आमने-सामने बैठ कर जिनके हाथ कोहनियों से मुड़ नहीं पा रहे हैं वे एक दूसरे को खिला दे रहे हैं क्योंकि हाथ स्वयं की ओर तो नहीं मुड़ेंगे किन्तु सामने बैठने वाले को निश्चय ही खिला दे सकेंगे। और बन गया काम, सभी ऐसे लोगों ने स्वादिष्ट खाने का आनन्द भी उठाया, कोई भी व्यक्ति भूखा नहीं रहा और न ही भोजन नष्ट हुआ। सभी तृप्त, स्वास्थ्यवान और सुखी हुए।

पूजनीय गहनानन्दजी इस कहानी का वर्णन कर यह सिद्धान्त देते की सभी यदि एक दूसरों का हित देख कर चलें तो इस पृथ्वी के वक्षस्थल पर स्वर्ग को भी लाया जा सकता है।



स्मृति कथा

परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी सुहितानन्दजी महाराज
सह संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ

मुज्जफरपुर आश्रम उस समय बेलूड़ मठ के एक केन्द्र के रूप में स्वीकृत नहीं हुआ था। पूजनीय गहनानन्द महाराज उस समय सह संघाध्यक्ष थे। दीक्षा प्रदान करने के लिए उन्हें आश्रम में आमन्त्रित किया गया था। ट्रेन के द्वारा वे आ रहे थे। जिस ट्रेन से वे आ रहे थे वह काफी विलम्ब से चल रही थी। महाराज को स्टेशन से आश्रम में लाया गया था। श्री श्री ठाकुर घर में प्रणाम के पश्चात उन्हें एक कमरे में बैठाया गया था, कुछ उपस्थित साधुगण उन्हें प्रणाम करने पर १०-१२ भक्त प्रणाम करेंगे। पूज्य महाराज जी सभी को दो-दो टॉफियां दे रहे थे। एक ६-७ साल के बच्चे को उसकी माँ ने महाराजजी को प्रणाम करने के लिए पंक्ति में आगे की ओर भेजा। प्रणाम करने पर महाराजजी उसे दो टॉफी देकर बोलते हैं कि जाओ इन्हें अपनी माँ को दे कर आओ। वह बालक दोनों टॉफियां अपनी माँ को देकर अपने लिए लेने के लिए महाराजजी के पास दोनों हाथ आगे बढ़ाता है, महाराज सभी को शान्त रहने का इशारा करते हैं। महाराज फिर से दो टॉफी उसे देकर बोलते हैं जाओ उन्हें दे आओ। ऐसा करते-करते जब सभी को टॉफियाँ बाँटना हो गया तब उसके दोनो हाथों में टॉफियाँ भर कर अनपेक्षित भाव से उसे सन्तुष्ट कर सभी उपस्थित सुधीजनों को खेल-खेल में कैसे परम्परागत शिक्षा दी जाए, की ओर ध्यान दिलाया।

एक युवक संन्यासी आश्रम से सम्बन्धित किसी कार्य के लिए परामर्श लेने हेतु पूजनीय महाराजजी के पास बेलूड़ मठ आए थे। महाराज उस समय सह महासचिव से साथ-साथ सेवा प्रतिष्ठान के भी दायित्व-प्रभार पर थे। संन्यासी सन्ध्या समय आए थे और

इधर पूज्य महाराजजी भी अत्यन्त व्यस्त थे। उस समय वे सेवा प्रतिष्ठान अस्पताल कार्यवश जाने वाले थे। बाध्य होकर उस संन्यासी को गाड़ी में बैठने को कहा, ताकि गाड़ी में ही उसकी समस्या पर विचार किया जा सकेगा। किन्तु उसी समय उस समस्या से भी बड़ी समस्या लेकर एक और संन्यासी गाड़ी में बैठे। जब वे सेवा प्रतिष्ठान पहुँचे तब रात्रि के ९:३० बज गये थे। महाराजजी ने युवक संन्यासी को रात्रि भोजन कर लेने के पश्चात मिलने को बोला। भोजन के पश्चात जब वह पूज्य महाराजजी के पास गया तो देखा कि उनको घेर कर और भी संन्यासीवृन्द बैठे हैं और विभिन्न समस्याओं पर चर्चा चल रही है। उसे देखकर महाराजजी ने निर्देश दिया कि तुम पास के घर में रात्रि विश्राम लो, जैसे ही मैं इन सबसे निपट लूंगा, तुम्हें बुलवा लूंगा।

रात्रि १२:३० बजे उन्हें बुला कर उपयुक्त परामर्श देकर सन्तुष्ट किया। युवक संन्यासी दूसरे दिन ही प्रातःपूर्व की ट्रेन से कहीं जाएंगे। वह तैयार होकर जैसे ही दरवाजे पर पहुंचे तो देखा कि वहाँ ताला लगा हुआ है। चाबी कहाँ रहती है उन्हें पता नहीं। तभी उसने देखा कि पूज्य महाराजजी उस समय रसोई में कुछ कर रहे हैं। महाराज बोले - 'तुम थोड़ा बैठो, मैं अभी आता हूँ।' फिर २-३ मिनट बाद ही महाराजजी आए, उनके हाथ में टोस्ट और एक गिलास गरम दूध था। उसे पास की टेबल पर बैठ कर खाने के लिए बोले, फिर चाबी ले कर ताला खोल कर अपने कमरे में चले गए और दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया। युवक संन्यासी उनको प्रणाम कर पाए या कुछ कृतज्ञता प्रकट कर पाए, उसका भी उसे सुयोग नहीं मिला।

स्वामी गहनानन्दजी : एक आदर्श महात्मा

परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी सुवीरानन्दजी महाराज
महासचिव, रामकृष्ण मठ एवं मिशन, बेलूड़ मठ

वर्ष १९६७ की बात है जब पूजनीय गहनानन्दजी (नरेश महाराज) के साथ मेरा प्रथम मिलने का सौभाग्य हुआ था। उस समय मैं रामकृष्ण मिशन के केन्द्र में अध्ययनरत छात्र ही था। वहाँ के एक संन्यासी के साथ 'शुभ विजया' (बंगाल में नवरात्रि के दिनामें में श्री श्री दुर्गापूजा के अन्तिम चरण में जब माँ दुर्गा की मूर्ति का विसर्जन हो जाता है, तब सभी रंगोली खेलते हैं और दशमी तिथि के दिन एक दूसरे को बधाईयाँ व मिठाई बाँट कर मिलने के पर्व को 'शुभ विजयदशमी' कहा जाता है) के उपलक्ष में उन्हें प्रणाम करने के लिए जाना हुआ था। पहली मुलाकात में ही उन्होंने मेरे जैसे एक छात्र के साथ जो उदारतापूर्वक सद्व्यवहार किया उससे मैं चकित रह गया। मैं एक नगण्य, कॉलेज का छात्र फिर भी उनका ऐसा सहृदयपूर्ण सौम्य व्यवहार।

इसके पश्चात रामकृष्ण संघ में आने पर उन्हें प्रणाम करने के लिए सेवा प्रतिष्ठान अस्पताल जाना हुआ। उन्होंने सहृदयतापूर्ण मेरे साथ बातें की। उनकी कुछ-कुछ बातें बहुत ही संक्षिप्त किन्तु बहुत ही गहरी एवं अर्थपूर्ण थी। उस समय अपरिपक्व मन से उनकी सब बातों को समझ नहीं पाया था। परवर्ती काल में जब कभी उनकी बातों को स्मरण कर विचार करता हूँ तो उनमें छिपे सार-गर्भित अर्थ मुझे आज भी स्फूर्ति प्रदान करते हैं।

फिर ७० के दशक में उन्हें अनेक बार देखने का अवसर मिला! उनके चलने-फिरने, काम-काज एवं बोल-चाल आदि सब कुछ में ही एक अद्भूत मर्यादा के भाव का प्रकाश मिलता। प्रायः ही वे बोलते, "देखो मन में गाँन्ठ बान्ध लो, कि तुम साधु होने के लिए आए हो, तुम्हारे अन्दर से ही भक्तगण भगवान श्री

रामकृष्णदेव की महिमा और भाव प्रत्यक्ष करना चाहते हैं। मठ का प्रत्येक अंग श्री प्रभु का ही एक स्वरूप है। इसलिए ऐसा कुछ न करो जिससे श्रीप्रभु की भाव मूर्ति क्षुब्द हो जाए।" मुझे याद आता है कि एक दिन उन्होंने एक साधु को किसी काम के लिए बुलाया था। उस समय पूजनीय महाराज सेवा प्रतिष्ठान अस्पताल के दायित्व प्रभार के पालन के साथ-साथ बेलूड़ मठ एवं मिशन के सह महासचिव के दायित्वों का भी निर्वहन कर रहे थे। वह साधु दोपहर के भोजन के पश्चात पान चबाते-चबाते उनसे मिलने आया और उनके सामने उपस्थित हुआ। यह आचरण देख पूज्य महाराजजी ने अपनी ओर से बहुत ही आपत्ति जताई। उस साधु को उस समय मधुर कण्ठ से किन्तु भर्त्सना का भाजन होना पड़ा। ऐसी थी उनकी तीक्ष्ण दृष्टि।

एक और घटना जिसमें अरूणाचल प्रदेश में स्थित एक केन्द्र में कार्यरत एक ब्रह्मचारी रात्रि-वास हेतु सेवा प्रतिष्ठान अस्पताल में आया हुआ था, अगले दिन प्रातःकाल में उसको गौहाटी जाने वाली उड़ान पकड़नी थी। वह ब्रह्मचारी अपनी यात्रा के लिए हवाई अड्डे जाने के लिए तैयार था। ऐस समय में उसके कमरे के दरवाजे पर कोई जोर जोर से खटखटा रहा था। इतने सुबह में कौन आया होगा? ब्रह्मचारी ऐसा सोचते-सोचते दरवाजा खोलते हैं, अरे ये क्या आश्चर्य, एकदम स्तम्भित, अवाक ! क्या यह सपना या कोई असम्भव सम्भव हुआ प्रतीत हो रहा है ! यह क्या देख रहा हूँ ! एक वरिष्ठ संन्यासी, महान कर्मयोगी, सेवा प्रतिष्ठान के कर्णधार, रामकृष्ण मठ और मिशन के सह महासचिव पूजनीय नरेश महाराज। सब कुछ उस क्षण में ऐसा घट गया मानो कोई एक बादल जो अचानक ही आकर पानी की हल्की बौछार कर ओझल हो जाए। पूजनीय महाराजजी अपनी मधुर मुस्कान के साथ बोले, 'शीत ऋतु है और तुम्हें बहुत दूर जाना है इसीलिए थोड़ा कॉफी बना लाया जल्दी से गर्म गर्म पी लो।' ऐसी सहानुभूति, ऐसा विशाल हृदय ब्रह्मचारी उसी क्षण से उनका सदैव के लिए गुलाम ही हो गया।

पूजनीय नरेश महाराज ने पूज्यपाद स्वामी निर्वाणानन्दजी के सान्निध्य में भुवनेश्वर रामकृष्ण मठ में अपना साधु जीवन आरम्भ किया था। निर्वाणानन्दजी के सम्पर्क में जो-जो व्यक्ति आए वे जानते हैं कि वे नरेश महाराज जी के साधु जीवन के सम्बन्ध में कितनी उच्च धारणा रखते थे। कभी कभी वे बोलते थे कि उसके (नरेश महाराज) भीतर अकूत आध्यात्मिक सम्पत्ति है बस एक बार प्रशासनिक दायित्व से मुक्त हो जाने पर वह आध्यात्मिकता के शिखर पर पहुँच जाएगा।

पूजनीय गहनानन्दजी धीरे-धीरे रामकृष्ण संघ के महासचिव, सहसंघाध्यक्ष एवं संघाध्यक्ष के पद पर आसीन हुए। इन समय-अन्तरालों में कई बार उनके सम्पर्क में आने का सौभाग्य हुआ। कितनी ही बार उनके व्यक्तित्व की विशाल शान्त-मूर्ति और गम्भीरता को देख कर दाँतो तले अँगुली दबा लेना पड़ता था। उनके सम्पर्क में रामकृष्ण संघ के अनेक वृद्ध एवं प्रज्ञावान संन्यासियों के लेख पढ़ने पर एक विचार अवश्य ही प्रकट होता है कि "इन महान संन्यासी स्वामी गहनानन्दजी के भीतर गीता में वर्णित 'स्थितप्रज्ञ' के लक्षणों का विलक्षण प्रकाश देखने को मिलता है।"

बहुत सी बातें मेरे मन में आ रही है, इन संस्मरणों को मैंनें अपने मन के कोने में यत्नपूर्वक सुरखित रखा है। किन्तु उन सभी को लिखने में मानो ऐसा हो जाएगा जैसे मैं अपनी आत्मकथा ही लिख रहा हूँ। केवल मात्र दो स्मृतियाँ जो पाठकों के लिए रूचिकर एवं कल्याणकारी प्रतीत हो सकती है (स्मृतियाँ छोटी हैं किन्तु अर्थपूर्ण एवं प्रेरणादायी हैं) उन्हीं का रोमहर्षपूर्ण मन्थन कर पूज्यपाद स्वामी गहनानन्दजी महाराज के प्रति अपनी श्रद्धाजंलि निवेदन करना चाहता हूँ।

एक दिन पूज्यपाद स्वामी निर्वाणानन्दजी महाराज के कमरे में एक ब्रह्मचारी उनका सेवा सम्बन्धित कार्य कर रहे थे। हठात् पूज्यपाद महाराज बोले, "सुनो, इधर आओ ! (अर्थात पूज्य

महाराजजी जिस खिड़की की ओर खड़े बाहर की ओर देख रहे थे, उस ओर ब्रह्मचारी को आने का संकेत दिया।) साधु देखना चाहते हो ?" देखो, वो साधु जो आम के उस वृक्ष के नीचे खड़े हैं। पूजनीय निर्वाणानन्दजी महाराज की दृष्टि में एक ब्रह्मज्ञानी का मूल्यांकन, वह साधु' अर्थात पूजनीय गहनानन्दजी महाराज।

एक और छोटी सी घटना है, देवधर से स्थानान्तरित होकर मैं बेलूड़ मठ आया था। संघगुरु का आशीर्वाद लेने के लिए उन्हें प्रणाम करने के लिए गया। प्रणाम करके जैसे ही पूज्य महाराज को बोला कि "महाराज मुझे लगता है कि अब मुझे मठ में ही रहना होगा, इसलिए यहीं रहने के लिए आ गया हूँ।" पूजनीय गहनानन्दजी महाराज बड़े ही मृदु स्वर में आशीर्वाद की मुद्रा में बोले, "बहुत अच्छा, बहुत अच्छा, मठ में तो आना ही होगा, एक दिन तो सभी को मठ में ही आना होगा।"

अन्त में गंगाजल से गंगापूजा करने के समान ही पूजनीय महाराजजी की एक उक्ति उद्धत कर अपनी लेखनी को विश्राम दूंगा। पूजनीय गहनानन्दजी की महासमाधि के बाद, कोलकाता स्टेट्समैन समाचार पत्र में एक वरिष्ठ संन्यासी का पूज्य महाराजजी के सम्बन्ध में स्मृति लेख छपा था, जिसमें हम जान पाते हैं कि वे स्वयं एक बात बोलते हैं, 'कार्य ही श्रेष्ठ आध्यात्मिक साधना एवं मानव सेवा ही श्रेष्ठ पूजा है। इन दोनों सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्तों का मैं सारे जीवन पालन करता आया हूँ।' यही सफल आध्यात्मिक जीवन हेतु समस्त वेदों का सार है, यही उनके जीवन का आकर्षण है, जहाँ वे रामकृष्ण लोक में लीन हो गये हैं। इस आर्दश चरित्र को हमारा शतकोटि प्रणाम। श्रीरामकृष्णार्पणमस्तु।

स्वामी गहनानन्द

एक विशाल हृदयवान और उर्जावान संन्यासी

परम पूज्य स्वामी चेतनानन्दजी महाराज
मिनिस्टर इन्चार्ज, विवेकानन्द वेदान्त समिति, सेंट लुईस

मैं १६५६-६० से स्वामी गहनानन्द जी को जानता हूँ, जब वे रामकृष्ण मिशन सेवा प्रतिष्ठान के सहायक सचिव थे और स्वामी दयानन्दजी महाराज सचिव थे, मैं उस समय अद्वैत आश्रम में आया ही था।

एक बार मुझे याद है, मुझे बगल में एक फोड़ा हुआ था मैं सेवा प्रतिष्ठान में चिकित्सा हेतु गया, उस समय वहाँ एक सीमेन्ट के छज्जे में अस्पताल का कार्य चल रहा था, जहाँ आज एक ऊँची इमारत बनी हुई है। मुझे अपने बगल के नीचे फोड़े की सर्जरी की सलाह दी गई थी।

स्वामी गहनानन्दजी प्रायः ही अद्वैत आश्रम आते-जाते रहते थे, इसलिए मेरा उनसे परिचय था। वे एक महान संन्यासी, एक महान कार्यकर्ता, प्रमिक, लोगों के प्रति सहानुभूति रखने वाले, जीवन के हर क्षेत्र में अपनी प्रखर बुद्धि से कार्य करने वाले मिशन के सर्वश्रेष्ठ संन्यासियों में से एक थे।

वर्ष १६७० में शायद अगस्त-सितम्बर में कोलकाता में बड़ी भारी वर्षा हुई थी। कोलकाता में सभी और बाढ़ आई थी। रामकृष्ण मिशन ने कुछ राहत कार्य शुरू किये और मुझे अद्वैत आश्रम की ओर से राहत-कार्यों का प्रभार मिला। इन क्षेत्रों में कार्य करने के लिए नाव की आवश्यकता पड़ रही थी इसलिए बेलूड़ विद्यामन्दिर में नाव लेने के लिए आया हुआ था, वहाँ एक स्थानीय सज्जन व्यक्ति ने खिचड़ी वितरित करने के लिए एक ट्रक भी दिया। उस नाव का उपयोग उत्तर, दक्षिण, पूर्वी कोलकात्ता के

बाढ़-ग्रस्त क्षेत्रों में प्रयोग होना था। इस कार्य हेतु अब हमें राहत-सामग्री के रूप में भोजन की आवश्यकता थी तो मैंने स्वामी गहनानन्दजी से इस सम्बन्ध में चर्चा की, तो वे बोले "तुम्हें कितने लोगों के लिए खाने की आवश्यकता है ?" मैंने कहा, "महाराज, पूरे क्षेत्र में बाढ़ आई है, सभी बस्तियों, झोपड़ियों के लोग हाई स्कूलों के भवनों में शरण ले चुके हैं ! लगभग ४००-५०० लोग वहाँ पर हैं, जिनको भोजन नहीं मिल रहा है।" उन्होंने तुरन्त ही अपना निर्णय सुनाया "तुम्हे उन सबको खिलाने के लिए भोजन मिल जाएगा।" उन्होंने अस्पताल की ३० नर्सों को इस काम में लगा दिया। खिचड़ी बनाने के लिए बेलूड़ मठ से बड़े-बड़े कन्टेनर लाए गए। मैं कुछ कन्टेनरों को अद्वैत आश्रम में ले गया, क्योंकि वहाँ इस तरह की सुविधाएँ नहीं थी, फिर दोपहर २-३ बजे खिचड़ी से भरे सभी ड्रमों को उस ट्रक में चढ़ा दिया गया, मैं भी उसी ट्रक में उन क्षेत्रों में गया, ऐसे भूखमरी और बाढ़ के बुरे समय में तोड़-फोड़ और लूट जैसी घटनाएं भी हो रही थी, उस समय वहां इसी तरह के उपद्रव भी चल रहे थे। मुझे साथ में देख कर इन लोगों ने ऐसा कुछ नहीं किया और बड़ी ही शान्ति से राहत-कार्य चला, सभी लोग बहुत खुश थे।

एक बार मैंनें देखा कि एक व्यक्ति लगभग मृत प्रायः हो गया था और दूसरे लोग उस पर कम्बल डाल कर कृत्रिम श्वास देने का प्रयास कर रहे थे। हुआ यह था कि दामोदर घाटी निगम ने वहाँ कुछ पम्प सड़क के एक छोर से दूसरे छोर तक पानी निकालने के लिए लगाए थे, तभी पम्प लगाने वाले इस व्यक्ति को बिजली का जोर से एक झटका लगा और वह मरणासन्न हो गया। उसी को बचाने के प्रयास चल रहे थे। मैंनें उसी समय वहाँ खड़े एक सैन्य अधिकारी से कहा, "महोदय वह आदमी मर रहा है उसे तुरन्त अस्पताल ले जाना चाहिए।" उसने मुझ गेरूआधारी को देखा, मैं उस समय १९७० से संन्यास दीक्षा प्राप्त कर चुका था। उपस्थित लोगों की सहायता से उस व्यक्ति को तुरन्त ही कैम्पबेल

अस्पताल ले जाया गया जो कि नीलरतन सरकार चिकित्सालय, सियालदाह के पास ही था। मुझे उस व्यक्ति के प्राण बच जाने से बड़ी प्रसन्नता हुई।



उसी समय की बात है, एक व्यक्ति घबराया हुआ मेरे पास आया और बोला कि पास के स्कूल भवन में एक महिला को प्रसूति दर्द हो रहा है जो कि बच्चे को जन्म देने वाली थी। उसने मेरी मदद मांगी। तुरन्त ही मैंने स्वामी गहनानन्दजी महाराज को फोन किया जो कि किसी आवश्यक बैठक में व्यस्त थे। इसलिए उनसे बात नहीं हो पा रही थी। मैंने मदद माँगने वाले से कहा कि प्रसूति दर्द किसी का इन्तजार नहीं करता इसलिए कुछ व्यक्तियों के साथ उस महिला को नीलरतन सरकार चिकित्सालय भिजवा दिया। फिर जब स्वामी गहनानन्दजी को मैंने यह घटना बताई तो उन्होंने मुझे डाँटा कि "तुमने उस रोगी को सेवा प्रतिष्ठान क्यों नहीं भिजवाया ?" मैंने कहा कि ''मुझे कैसे पता चलता कि वहाँ अस्पताल में कोई बिस्तर खाली है या नहीं?'' उन्होंने मुझे डांटा कि ''प्रसूति दर्द समय की प्रतिक्षा नहीं करता वह महिला मर रही थी और तुमने उसे तुरन्त सेवा प्रतिष्ठान में नहीं भिजवाया।'' मुझे भी बुरा लग रहा था, फिर उस महिला का मैंने समाचार लिया और पता चला कि वह स्वस्थ थी।

मैं कुछ भक्तों के साथ 'शू ऐनेमल इन्डस्ट्रीज' से अद्वैत आश्रम आया था। राहत-कार्यों में हम अभावग्रस्तों के लिए दिन में केवल एक बार ही भोजन की व्यवस्था कर पा रहे थे, इसलिए मन में कुछ अच्छा भी नहीं लग रहा था। यही सोच कर कि कुछ सहायता हमें पूज्य महाराजजी से मिल जाएगी, उनसे बात की तो वे पूछे "तुम क्या चाहते हो ? कितने लोगों के लिए और भोजन की आवश्यकता है ?'' तो मैंने कहा ''मुझे १००-२०० पाव रोटियाँ देने से अच्छा होगा।" ''ठीक है, हो जाएगा।" उन्होंने पूरी व्यवस्था कर कहा ''तुम धर्म तल्ला स्ट्रीट पर बरूआ बेकरी है वहां चले जाओ, जहाँ एक बड़ी जीप ५ बजे आयेगी जो तुम्हें पाव दे देगी।'' मैं स्कूल भवन में जीप का इन्तजार कर रहा था क्योंकि अभावग्रस्तों के पास भोजन पाने का कोई ओर स्रोत्र नहीं था

ताकि वे कुछ खाना पा सके और उनके बच्चों को कुछ अन्न मिल सके। जब मैंनें झुग्गी झोपड़ीयों के सर्वे करने के लिए एक नाव मंगवाई तो इस पर कुछ लोग मुझ पर पागलों जैसा गुस्सा करने लगे क्योंकि बाढ़ के पानी की लहरें उनके घरों के भीतर आ रही थी। पानी इतना अधिक आ रहा था लगता था कि हम सभी डूब जाएंगे। सड़क के दूसरी ओर पानी को पम्पों से निकाला जा रहा था फिर हमनें ३-४ दिनों तक राहत कार्य ऐसे ही चलाए रखा। स्थानीय लोगों ने कहा कि राहत के लिए उनके साथ जुड़ना होगा ताकि गली-गली घूम कर संग्रह किया जा सके। वे एक जीप ले आए और गाते हुए मांगते कि ''अन्न दे मां अन्नपूर्णा'' और हमने कपड़े, चावलादि गली दर गली और सड़क दर सड़क एकत्रित किये। इसके उपरान्त सी० आई० जे० रोड़ पर आया तब डाक्टर श्री के० के० घोष के घर गया जो कि स्वामी विरजानन्दजी के शिष्य थे और कोलकता मेडिकल कॉलेज में ई० एन० टी के प्रमुख थे। वे घर पर नहीं थे उनकी धर्मपत्नी ने कहा, "महाराज आप अपने आश्रम जाइए, वहाँ मेरे पति आप से मिलने के लिए आ जाएंगे।" वे आये और उन्होंने राहत कार्य के लिए बहुत सा धन भी दिया ताकि मैं राहत-कार्य जारी रख सकूं।

इसी बीच उस समय कुछ नक्सली लड़के भी वहां आए और एक सुनार की दुकान से पैसे के लिए अमीरों पर चिल्ला रहे थे। मैंने उनसे पूछा कि कि वे क्या चाहते हैं तो उन्होंने कहा कि वे राहत-कार्य करना चाहते हैं। मैंनें कहा, मेरे साथ आओ। मैं तुम्हें चावल और दाल दूंगा। उस धनी व्यक्ति ने चैन की सांस ली क्योंकि उसे लगा कि नक्सली उन पर हमला करने की कोशिश कर रहे थे और वे मेरे कारण से बच गए। पहली बार मैंनें राहत कार्य के लिए लोगों के दरवाजे खटखटाये थे। स्वामी गहनानन्दजी महाराज ने इस प्रकल्प में मेरी बहुत मदद की थी।

जब भी मैं अमेरिका से आया तो उन्होंनें हमेशा कम से कम एक रात्रि के लिए सेवा प्रतिष्ठान में रहने के लिए आमन्त्रित

किया। वे पूरे दिन काम करते और दोपहर में कुछ आराम करके देर रात तक कार्य कर सकते थे। वे रात्रि में कार्य करने के आदि थे। इसी कारण उनसे रात्रि में ही विभिन्न विषयों और आश्रम की गतिविधियों पर चर्चा होती थी।

एक बार एक भीष्म चैरेटी शो रवीन्द्र सदन में था जिसे देखने के लिए वे मुझे साथ में ले गये। जब मैं १९९८ में भारत आया उस समय वे महासचिव के पद पर थे। उन्होंने मुझे कहा कि यदि बांग्लादेश के केन्द्रों की सहायता की जा सके तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। उनके कहे अनुसार जब भी मुझे कोई दान में धन इत्यादि देता तो वहाँ भेजने का प्रयास करता।

उनके बारे में मैं यही कह सकता हूँ कि वे विशाल हृदयवान, उर्जावान साधु और महान कर्मयोगी थे।

(बेलूड़ मठ में पूज्य स्वामी चेतनानन्दजी महाराज ने अपने संस्मरणों को अपने कक्ष में स्वामी तत्परानन्दजी को टेप करवाए थे, जिसे अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद कर यहाँ प्रस्तुत किया गया है।)

कुछ पुरानी स्मृतियाँ

परम पूज्य स्वामी अच्युतानन्दजी महाराज
वरिष्ठ संन्यासी, बेलूड़ मठ

'आलोक तुम कुछ भी हो जाए बर्खास्तगी नोटिस पर अपने हस्ताक्षर नहीं करना। वे लोग इस नोटिस को लेकर कुछ षडयन्त्र कर सकते हैं। कोर्ट में भी जा सकते हैं। तब तुम्हें कोर्ट में साक्ष्य देने हेतु भी जाना पड़ सकता है। इसलिए उस पर हस्ताक्षर नहीं करना ही अच्छा होगा।' १९७३ में नवम्बर-दिसम्बर के कोई एक समय में पूजनीय नरेश महाराज सेवाप्रतिष्ठान के कार्यालय में बैठे हुए मुझे यही समझा रहे थे। साथ में थे पूजनीय स्वामी अकुण्ठानन्दजी महाराज (शम्भू महाराज), नरेश महाराज के घनिष्ठ संन्यासी बन्धु। वे बीच-बीच में बोल रहे थे -'पूजनीय चिन्ताहरण महाराज नहीं हैं, इसलिए गोलपार्क के कर्मचारियों में कलह उत्पन्न हो रहा है।' कलह के कारण ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है, कि ७-८ कर्मचारियों को बर्खास्त करना पड़ेगा और उससे पहले उन्हें कारण बताओ नोटिस भेजना पड़ेगा इसलिए कोई वरिष्ठ दायित्त्वाधीन संन्यासी को ही हस्ताक्षर करना होता है। तब गोलपार्क इंस्टिट्यूट आफ कल्चर के अध्यक्ष पूजनीय स्वामी नित्यस्वरूपानन्दजी अर्थात चिन्ताहरण महाराज हठात् ही चिकित्सा हेतु दिल्ली चले गये।

उस समय इंस्टिट्यूट में कर्मचारियों का आन्दोलन आसमान छू रहा था। कुछ कर्मचारियों ने पूजनीय स्वामी नित्यस्वरूपानन्दजी को अभद्रता पूर्ण गाली-गलौज भी किया, इसी कारण वे अत्यन्त ही क्षुब्ध हो दिल्ली चले गये। मुझे बोल गये-'तुम जैसे भी हो इस परिस्थिति को सम्भालो। नरेश महाराज और अन्यों के साथ मन्त्रणा कर कार्य करो।' ऐसे में मुझे चारों ओर से बड़ी समस्याओं का सामना करना पड़ा। लेकिन मेरा पक्ष थोड़ा ठीक ही

रहा क्योंकि मेरे साथ आन्दोलनकारियों ने कभी कोई दुर्व्यवहार नहीं किया था। सिर्फ ऑफिस में आते और हाजरी रजिस्टर में हस्ताक्षर कर नीचे जाकर आपस में मंत्रणा करते रहते। उस समय वहाँ दो प्राचीन संन्यासी भी थे, स्वामी निर्वृत्यानन्दजी अर्थात उपेन महाराज और स्वामी रसज्ञानन्दजी महाराज। किन्तु पूजनीय चिन्ताहरण महाराज ने उन्हें कुछ भी दिशा-निर्देश नहीं दिये सिर्फ मुझे बोल कर चले गये। जो भी हो, उस समय बेलूड़ मठ में पूज्यपाद् प्रभु महाराज अध्यक्ष, पूजनीय गम्भीर महाराज महासचिव और पूजनीय भूतेशानन्दजी और चिदात्मानन्दजी सह महासचिव के रूप में थे। उन्होंने मुझे ही मठ में वस्तुस्थिति के सम्पर्क में चर्चा करने के लिए बुलाया। कानूनी सलाहकारों के पास जाने को बोला और पूजनीय नरेश महाराज के साथ सब समय परामर्श ले कर सब कागजी कार्यवाही करने के लिए निर्देश दिया। उस समय मैं गोलपार्क के स्कूल आफ लर्निंग के प्राचार्य पद का दायित्त्व भार भी देख रहा था। इस दायित्त्व के सम्पर्क में भी पूजनीय नरेश महाराज एवं स्वामी युक्तानन्दजी अर्थात पानु महाराज की चेष्टा ही थी कि मुझे इस कार्य हेतु उपयुक्त समझा गया।

घटना ऐसी थी, एक दिन गोलपार्क में पूजनीय चिन्ताहरण महाराज के निमन्त्रण पर पूजनीय नरेश महाराज भोजन के लिए आए। उस समय कर्मचारियों का आन्दोलन प्रारम्भिक अवस्था में ही था। भाषा विद्यालय के प्राचार्य एक सेना से रिटायर्ड ऑफीसर थे। वे बड़े ही कड़क मिजाजी और अनुशासन प्रिय प्रशासनिक अधिकारी थे। चिन्ताहरण महाराज के साथ प्रायः हर दिन ही खट-पट होती रहती थी। वे उनके स्थान पर किसी योग्य संन्यासी को यह दायित्त्व देना चाहते थे। किन्तु उनकी पसन्द का कोई भी मिल नहीं रहा था। उस दिन पूजनीय नरेश महाराज आए हुए थे और उसी दिन आश्रम के बहुत से कर्मचारी आन्दोलन करने का मन बना लेने के कारण अनुपस्थित थे। भोजन परोसने से लेकर बर्तन धोने का कार्य हम सभी साधुओं पर ही था। और मैं भोजन

कक्ष के पास वाले कक्ष में बर्तन धो रहा था। चिन्ताहरण महाराज ने प्राचार्य पद के लिए कोई उपयुक्त संन्यासी की बात उठायी। हठात् नरेश महाराज और पानु महाराज बोल उठे 'प्राचार्य तो आपके अपने घर में ही तो है।' महाराज बोले 'अरे यह क्या मुझे तो पता ही नहीं।' तभी पानु महाराज बोले। 'ये तो रहा, पास के कमरे में जो बर्तन धो रहा है।' और नरेश महाराज बोले –'रत्नाकर नहीं जानता उसके गम्भीर जल में कितने रत्न छुपे हुए हैं। देखो सेवक तो आपका योग्यता से पूर्ण है उसे ही प्राचार्य बना दो और अपनी समस्या से मुक्ति पाओ।'

इस प्रकार इन दोनों पूजनीय वरिष्ठ संन्यासियों की इच्छा से पूजनीय चिन्ताहरण महाराज ने मुझे प्राचार्य नियुक्त किया। पर इससे आन्दोलनकारियों को और गति मिल गयी जैसे आग में किसी ने घी डाल दिया हो। जाते-जाते पूर्व प्राचार्य ने अपने चेले-चामुण्डों और पण्डों को भड़काने में कोई कसर न छोड़ी। परन्तु मुझे यह सब समझ में आ गया था और पहले से ही प्रस्तुत था। पूजनीय नरेश महाराज ने भी मुझे समझाया कि उन सभी से अच्छा व्यवहार रखना, देखोगे कि वे तुम्हारे सहायक ही होंगे और कार्य में कोई भी असुविधा न होगी।

उस समय प्रत्यक्ष ही समझ में आया कि पूजनीय नरेश महाराज अपने कार्यों में कितने पारदर्शी, शान्त चित्त हो दूर-दृष्टि रखते थे। उनके दिशा-निर्देशों का अनुसरण कर मैं आन्दोलनकारियों के बीच अच्छे से ही रह पाया। पूजनीय चिन्ताहरण बहुत ही मूडी थे। आन्दोलनकारियों के अपमान को सहन न कर पाने के कारण वे दिल्ली चले गये थे। मठ के कर्तृपक्ष के आवाहन पर भी वे वापिस लौट कर नहीं आ रहे थे।

जो भी हो, पूजनीय नरेश महाराज के दिशा-निर्देशों की अनुपालना कर मैंने बर्खास्तगी नोटिस एवं कारण बताओ नोटिस पर हस्ताक्षर नहीं किए। एक दिन के लिए श्रद्धेय श्री अमिय मजूमदारजी को हस्ताक्षर करने के लिए अधिकृत कर उनसे

अनुरोध करने पर वे हस्ताक्षर करने के लिए राजी हुए। उस समय गाड़ी के चालकगण भी इसी आन्दोलन में उतरे हुए थे। इसलिए उसे लेकर मैं मठ नहीं जा पाता। पूजनीय नरेश महाराज सेवा प्रतिष्ठान से गाड़ी भेजते और उसमें ही उनके साथ मठ जाकर नाना-विध कार्यों को सम्पूर्ण करता ओर उन्हीं के साथ वापिस आना होता। उस समय उनके साथ हुए वार्तालापों का कुछ संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

गाड़ी में आने के समय एक दिन पूजनीय महाराजजी से मैंने पूछा - अच्छा महाराजजी, आपको तो आपके गुरुदेव पूजनीय स्वामी विरजानन्दजी से बहुत पहले ही मन्त्र दीक्षा प्राप्त हुई, आपको कभी उनकी व्यक्तिगत सेवा करने का अवसर भी तो मिला होगा। वे कुछ क्षण गम्भीर हो गये। फिर बहुत ही धीमे स्वर बोले जैसे कि स्वयं से ही वार्तालाप कर रहे हों, बोलने लगे -'कुछ सेवा कर पाया। सम्भवतः १९५०-५१ के समयान्तराल में, जब वार्धक्य के कारण उनका शरीर रूग्ण होना प्रारम्भ ही हुआ था। उस समय मैं कोलकाता के अद्वैत आश्रम में कर्मी के रूप में था। महाराज के लिए प्रतिदिन ही उनके प्रयोजन हेतु औषध-पथ्यादि और कुछ शाक-सब्जी, फलादि लेकर बेलूड़ मठ ले जाने का सौभाग्य मिलता था। सारा दिन आफिस में कार्य करने के बाद शाम को वेलिंग्टन स्क्वॉयर से ट्राम से कुछ रास्ता तय होता और फिर कुछ दूर पैदल चल कर आहिरीटोल से गंगा पार कर सालकिया पहुँचता वहाँ से फिर पैदल चलकर मठ में संध्या समय पहुँच जाता। मठ में श्रीश्रीठाकुर को प्रणाम कर सब सामान लेकर पुराने मठ की पहली मन्जिल में विमल महाराज (स्वामी श्रद्धानन्दजी) के साथ मिलता। उन्हें सब समझा कर पूज्य गुरुदेव के दर्शन कर प्रणाम निवेदित करता। उनकी इस प्रकार सेवा में गर्मी-सर्दी-वर्षादि सभी परिस्थितियों में उपस्थित हो जाता। नित्य प्रतिदिन ऑफिस का कार्य समाप्त कर बाजार से सामान खरीद कर स्वयं ही जाता। पूज्यपाद गुरुदेव, 'प्रतिदिन प्रणाम के समय

ऐसी करूणा भरी दृष्टि से देखते कि आज भी मेरा मन यह स्मरण कर वहीं उनके पाद्पद्मों में उपस्थित हो जाता है।' इस प्रकार वे बहुत सी पुरानी स्मृतियों का रोमाँचकारी स्मरण-मनन करते, उनके ऐसे भावपूर्ण आवेग को देख कर लगता कि फिर से वे नये सिरे से नरेश महाराज हो गये हैं। साधारणतः वे अपने श्रीगुरु और उनसे हुई दीक्षा के सम्पर्क में कुछ भी नहीं बोला करते थे। यहाँ तक कि सेवा प्रतिष्ठान जाने पर उनके कमरे में उनके गुरुदेव की कोई छवि भी मैंने नहीं देखी थी। श्रीश्रीठाकुर, श्रीश्रीमाँ और स्वामी विवेकानन्दजी के अलावा पूज्यपाद् माधवानन्दजी की एक बड़ी तस्वीर वहाँ टंगी हुई अवश्य देखी थी।

इसी प्रकार बहुत सी बातें उनके साथ गाड़ी में हुआ करती थी। एक बार उन्होंने एक प्रस्ताव रखा, 'आलोक, तुम सेवा प्रतिष्ठान में कर्मी के रूप में आना पसन्द करोगे।' मैंने ऐसा कुछ सोचा नहीं था, क्योंकि गोलपार्क में मेरा कार्य अभी तक समाप्त नहीं हुआ था।यही बात उन्हें बताई और एक व्यक्तिगत असुविधा भी उनको बतलाई। उन्होंने सब कुछ हँसी में उड़ाते हुए कहा, 'ये सब कोई बड़ी समस्या नहीं है। अमुक स्वामीजी का पूर्वाश्रम तो पास ही है, वे तो यहीं हैं। तुम्हारा पूर्वाश्रम पास रहने पर भी कुछ नहीं होने वाला, तुम राजी होने से मैं चेष्टा कर तुमको यहाँ ला सकता हूँ।' मैं अपनी सहमति नहीं देना चाहता था, और उन्होंने भी फिर मुझे इस सम्पर्क में और कुछ नहीं बोला। एक बार मुझे कुछ कर्मचारियों को 'कारण बताओ नोटिस' जारी करना पड़ा था। उन्हें एक-एक कर अपने कार्यालय में बुलाकर नोटिस उनके हाथों में थमाया। उन कर्मचारियों के कुछ उग्र होकर मुझे क्षति पहुँचाने की सम्भावना रहने के कारण पूजनीय नरेश महाराज ने उस दिन मठ से बहुत से साधुओं को भेजकर मेरे कार्यालय को घेर कर सुरक्षा कवच के रूप में परिणत कर दिया था, इस ओर मेरे उस दिन सेवा प्रतिष्ठान में कर्मी के रूप में आने के प्रस्ताव में

असहमत होने से उनमें कोई क्षोभ भी नहीं था। उनकी कार्यदक्षता देखकर कोई भी मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता था।

कुछ समय में ही आन्दोलनकारियों के झमेलों से मुक्ति मिलने पर पूजनीय लोकेश्वरानन्दजी महाराज गोलपार्क के नए सचिव के रूप में आए। उन्हें अपनी शक्ति-सामर्थ्य के अनुसार उनके कार्यों में सहायक के रूप मैं प्रस्तुत रहता। फिर वहाँ लम्बे समय तक रहने के पश्चात स्थानान्तरण की इच्छा होने लगी। मैंने पूजनीय भूतेशानन्दजी को बोला, उन्होंने मुझे नरेश महाराज से मिलने के लिए आदेश दिया। पूजनीय नरेश महाराज को स्थानान्तरण हेतु जब कहा तो वे बोले -'वाह तुम थोड़ा भ्रमण कर आओ। आसाम में धुबड़ि में अतिवृष्टि के कारण बाढ़ आई है। मठ को आसाम सरकार ने राहत कार्य करने के लिए निवेदन किया है। तुम राहत-कार्य करने हेतु वहाँ सम्पूर्ण दायित्त्व लेकर जाओ। गुवाहाटी में पूजनीय पशुपति महाराज हैं वे इस कार्य में सभी प्रकार से सहायता करेंगे।' उनके निर्देशानुसार वहाँ जाना हुआ। बहुत ही सुन्दर तरीके से राहत कार्य हुआ। मेरे वापिस लौटने पर उन्होंने इस विषय पर बहुत सी बातों की चर्चा की जो कि उन्होंने उनके एक पूर्व परिचित अध्यापक बन्धु से सुन रखी थी।

उसके पश्चात बहुत सा समय बीत गया। सम्भवतः वर्ष १९८५ का समय होगा। वे सह महासचिव के पद पर थे। और पूजनीय हिरण्मयानन्दजी महासचिव के पद पर थे। उस समय किसी एक कार्यवश उन्होंने मुझे अपने कार्यालय में बुलाया। कुछ गम्भीर भाव से उन्होंने मुझे कुछ बातें बोली। किन्तु वे सब मुझे ठीक नहीं लगी और मैंने भी प्रत्युत्तर में उनके सामने हठकारिता के साथ जवाब दिया। यह ठीक तो नहीं था, परन्तु मुझसे रहा नहीं गया और ऐसा व्यवहार मुझसे हो गया। किन्तु आश्चर्य की बात थी ! उन्हें मुझसे शायद ऐसे व्यवहार की अपेक्षा न थी और मेरी ओर कुछ क्षण आँखों में आँखें डालकर देखते रहे, मेरे आँखों में उस समय अश्रु-धारा अटकी पड़ी थी। फिर वे बड़े ही मधुर स्वर में

सहानुभूतिपूर्ण बोले –'मुझे नहीं पता था कि तुम्हें इतना कष्ट होगा, जो हुआ सो हुआ, जाओ, तुम खुश रहो।'

इसके पश्चात उनके काँकुड़गाछी जाने के बाद, सह संघाध्यक्ष के रूप में उन्हें एक नए महामानव के रूप में देखा। कई बार उनके वहाँ बुलाने पर जाना हुआ। शाम को कभी-कभी उनके साथ घूमने जाने का सौभाग्य होता। कुछ न कुछ प्रसंग अवश्य ही होते। एक बार वे दुर्गापुर और वर्द्धमान दीक्षा के लिए गये थे उसी समय उनके साथ और अधिक घनिष्ठता का अवसर मिला। उस समय प्रतिदिन ही सन्ध्या समय सत्प्रसंग का कार्य मुझे ही करना होता था। आश्रम में उनकी उपस्थिति के कारण ही बहुत से भक्तों का समावेश हुआ था। वे पीछे की कुर्सी पर आराम से बैठते और अपने भाषणों के दौरान मुझसे कई बार पूछते –'आलोक, अमुक घटना किस समय हुई, अमुक श्लोक सुनाओ।' एक दिन बोले –'तुम जब धुबड़ि में राहत-कार्य के लिए गये थे तब वहाँ के भक्तों से पता चला था कि तुम वचनामृत पाठ बहुत ही सुन्दर तरीके से करते हो। आज देखा कि वे ठीक ही बोलते थे।' उनके जैसे महापुरूष के श्रीमुख से ऐसी प्रशंसा सुनकर तो मुझे कहाँ राजा भोज और गंगू तेली की तुलना स्मरण हो आई। उस दिन बड़ी लज्जा भी अनुभव हुई पर उनका आशीर्वाद भी इसी को माना जाए तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। उसके पश्चात उनसे मिलना हुआ बेलूड़ मठ में, जब वे अध्यक्ष हो कर आए। उनको प्रणाम करने जाने से ही उनके सेवक विकास महाराज उनके पास जाकर बोलते –'महाराज, आपके छोटे गुरुभाई आए हैं।' पूज्य महाराजजी तो इशारों में ही निर्देश देते थे, और मिठाई मंगवाकर मुझे खिलाते।

अन्त में एक और घटना का स्मरण हो आया। पूजनीय आत्मस्थानन्दजी महाराज जब महासचिव थे तब स्नानयात्रा के दिन मिशन ऑफिस में उन्हें प्रणाम करने के लिए गया। वे उस समय भोजन के लिए बैठे ही थे। उनको प्रणाम निवेदित किया और उस

समय उन्होंने उनके टेबिल पर एक वेल्वेट के बाक्स में रखी गोल्ड प्लेटेड पॉकेट घड़ी मेरे हाथ में थमाई और बोले, 'जानते हो ये घड़ी किसकी है ? तुम्हारे गुरुदेव का आज जन्मदिन है, इसी प्रकार एक जन्मदिन पर तुम्हारे एक वरिष्ठ गुरु भ्राता (पूजनीय स्वामी गहनानन्दजी) की दी हुई यह घड़ी आज तुम्हें देता हूँ।' मैंने फिर से उन्हें प्रणाम कर बहुपुण्यस्मृतिधन्य और पवित्रस्पर्श से पूर्ण उस पॉकेट घड़ी को चैन समेत अपने हाथ में लिया और माथे से लगा लिया। आज भी उसे अपने पॉकेट में रखने पर उन पवित्र स्मृतियों को स्मरण कर उन्हीं महात्माओं के स्नेहस्पर्श को अनुभव करता हूँ।

आज वार्धक्य के साथ-साथ उनकी पुण्य स्मृतियाँ तरँगों के रूप में भावोद्वेलित करती हैं और फिर से उन्हीं के चरणों में ला बैठा देती हैं।

इति



योगस्थ स्वामी गहनानन्द

परम पूज्य स्वामी गिरिधरानन्दजी महाराज
वरिष्ठ सन्यासी, बेलूड़ मठ

एक बार वे बोले कि अपने आदर्श को इतनी गहराई से चिन्तन-मनन और ध्यान का विषय बना लो कि वही अपने सर्वांग में प्रकाशित हो उठे, देखोगे कि मन में अपने सच्चे स्वरूप का दर्शन तुम्हें होगा ही।

उनकी दिनचर्या, ध्यान का समय, व्यायाम और कार्यों में उनकी पारदर्शितादि में एक आदर्श संन्यासी की ही झलक मिलती थी।

सेवाप्रतिष्ठान के कार्यों में विभिन्न अवसरों पर उनकी संयमित वाणी, सजगता और संतुलित मानसिक अवस्था एक अपूर्व शान्ति की छटा बिखेरती थी। उनको कभी उत्तेजित होते नहीं देखा। सभी के मत को साथ लेकर चलना उनके प्रशासनिक गुणों का प्रथम पहलू था। अपने व्यस्ततम कार्यों के बीच कभी अनावश्यक वार्तालाप या हँसी मजाक अथवा समय नष्ट करने जैसे व्यवहारों का उनके जीवन में कोई स्थान नहीं था।

वे कई बार मुझे अपने सहायक के रूप में मिशन के कई केन्द्रों में ले जाते, देखता कि उनके पास कार्यों की कोई कमी न थी, जरा सा भी बैठते, तो कोई न कोई कार्य उनके सम्मुख उपस्थित हो जाता। मैं उनके पत्राचारों में सहयोग करता था। ध्यान के प्रति उनका रूझान बहुत रहता था, उनके ध्यान के समय मैं किसी को भी उन्हें परेशान नहीं करने देता।एक योगी के समान थी उनकी दिव्य कान्ति। तभी तो वे इतना कार्य कर गये, नहीं तो एक जीवन में कोई इतना कैसे कर सकता था। कर्म ही पूजा है, यह उनके जीवन से सीखा जा सकता था। कुछ समय के लिए ही नहीं अपितु पूरे जीवन श्रीश्रीरामकृष्ण संघ की सेवा ही उनकी साधना का अभिन्न स्वरूप था। इतने गम्भीर मुद्दों पर भी उनकी

पारदर्शिता और उनका पवित्र जीवन मुझे आज भी रोमांचित करता रहता है। प्रशासनिक कार्यों के बीच मतभेदों का उन्हें बहुत बार सामना करना पड़ा और ऐसे में ही उनके दृढ़ चारित्रिक एवं आध्यात्मिक गुणों को सभी ने प्रत्यक्ष किया। संघ के विभिन्न दायित्त्वों में आने वाली असुविधाओं और कठिनाइयों के दिनों में उनके पास रहने का जो मुझे सौभाग्य मिला उसने मुझे भी उनको और अधिक समीप से देखने का अवसर प्रदान किया उसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ। इति ।

(बेलूड़ मठ में पूज्य स्वामी गिरिधरानन्दजी महाराज ने अपने कक्ष में इन संस्मरणों को स्वामी तत्परानन्दजी को टेप करवाए थे, जिसे अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद कर यहाँ प्रस्तुत किया गया है।)



परम पूज्यपाद स्वामी गहनानन्दजी महाराज के प्रति संस्मरण

परम पूज्य स्वामी सत्यरूपानन्दजी महाराज
सचिव, रामकृष्ण मिशन, रायपुर

जब मैं बहुत वर्षों पूर्व बेलूड़ मठ में कार्यरत था तब श्रीश्रीठाकुरजी की विशेष कृपा से मुझे परम पूज्यपाद स्वामी गहनानन्दजी महाराज के सम्पर्क में आने का बहुमूल्य अवसर मिला। अक्सर मैं पूज्य महाराजजी को सेवा प्रतिष्ठान से बेलूड़ मठ, मुख्यालय आते देखता था। उस समय मैं मिशन मुख्यालय पर कोई एक विभाग देखता था। आदरणीय महाराजजी मठ एवं मिशन की सम्पति बाबत विभागों में चल रही कार्यवाही के सम्बन्ध में बहुधा रपट पूछा करते थे।

प्रायः जब वे बेलूड़ मठ आते थे तो कार्यालय के कार्य और साधु और भक्तों की बैठकों में व्यस्त रहते थे। उनके व्यस्त कार्यक्रमों के बावजूद मैं उन्हें स्वयं के कार्यो की रिपोर्ट देता था। प्रारम्भ में मैं सोचा करता था कि महाराज केवल सुनते ही हैं और उन्हें उन बातों का कोई स्मरण नहीं रहता होगा। लेकिन यह तब आश्यर्चजनक लगा जब ३-४ माह के बाद भी उन्होंने उन विषयों के सम्बन्ध में गहराई से मुझसे पूछा, उसके बाद से मैं पूर्णतया सजग रह कर उन्हें पूरी जानकारी देता था।

पूज्य महाराज जी में दृढ़ धैर्य काएक अद्भूत गुण था। जब वे मठ के सहायक महासचिव बने और साथ ही सेवा प्रतिष्ठान के सचिव का कार्यभार भी देखते थे उस समय वे प्रायः रात्रि ६ बजे बेलूड़ मठ आया करते थे और अपने सीढ़ियों के ऊपर बने कार्यालय में देर रात तक बैठकर कार्य किया करते थे। उस समय वे विभिन्न कार्यो के सम्बन्ध में मठ एवं मिशन के साधुओं के साथ विचार विमर्श करते थे।

कभी-कभी वे प्रातः सेवा प्रतिष्ठान के लिए प्रस्थान करते तो बहुत ही धैर्यपूर्वक मुस्करा कर कहते, “क्या यह तुम्हारे लिए सुविधाजनक होगा (तोमार कि असुविधा होबे ?) यदि तुम ११.३० बजे आवो ? वहाँ हम तीन घन्टे महाराज की प्रतीक्षा करते क्योंकि उन्होंने ११.३० का समय दिया था परन्तु यह नहीं जानते थे कि वह समय रात्रि ११.३० का था या पूर्वान्ह का ?

उनमें दिन में १३-१४ घन्टे कार्य करने की जबरदस्त क्षमता थी। उन्हें कभी थकते नहीं देखा। मैंनें पूज्य महाराजजी को कभी किसी पर उत्तेजित या अधैर्यपूर्ण व्यवहार करते नहीं देखा, चाहे वे कार्य कर रहे हो अथवा सेवा प्रतिष्ठिान का निरीक्षण। बाद में जब वे महासचिव बन गये तो सेवा प्रतिष्ठान से बेलूड़ मठ आ गये। एक महान संगठन का महत्वपूर्ण दायित्व उनके कन्धों पर होने पर भी उन्हें शान्त स्वभाव में देखा। महासचिव बनने के बाद भी देखा कि वे साधुओं की उनके केन्द्र सम्बन्धित समस्याओं को धैर्य और शान्ति से सुनते चाहे उनकी संस्था प्रधानों के उनके प्रति व्यवहार अच्छा न भी रहा हो। बहुत बार वे पीड़ित साधुओं की व्यथा सुनकर समाधान कर देते थे। वे बहुत ही स्नेह से कहते, “मैंनें तुम्हारी समस्या सुन ली है मेरा व्यक्तिगत सुझाव यह है कि तुम प्रयास करके थोड़ा समय और निकालो।” यदि तुम्हारे लिए फिर भी बहत ज्यादा कठिनाई है तो मैं तुम्हारी सहायता के लिए तत्पर रहूंगा। जब वे सेवा प्रतिष्ठान के प्रभारी होने के साथ ही साथ बेलूड़ मठ के सहायक महासचिव का भी कार्य सम्भालते, वहां पर कुछ समस्या उत्पन्न करने वाले संन्यासी जो कहीं पर भी अपना सामंजस्य नहीं बैठा पाते थे, महाराज उन्हें अपने आचरण में सुधार करने हेतु मनाते और कहते कि यदि वे उन्हें आश्रय नहीं देते तो वे संघ से बाहर किये जा सकते थे और उनका जीवन दुःखदायी हो सकता था। संघ में अभी भी कुछ साधु ऐसे है जो कि अच्छे जीवन का निर्वाह कर रहे हैं।

परवर्ति काल में जब वे उपाध्यक्ष एवं अध्यक्ष बने और उनका दीक्षा कार्यक्रम बना उसमें उनके साथ रहने का मुझे भी सौभाग्य मिला। वे उदारतापूर्वक भक्तों को दीक्षा प्रदान करते थे। मुझे अपने एक केन्द्र में दीक्षा की घटना का स्मरण आता है। एक युवा माता जो कि एक कॉलेज में व्याख्याता थी वह पूज्य महाराज से दीक्षित हुई। युवा मैया की एक ७-८ वर्ष की लड़की भी थी। जब उसकी माँ दीक्षा के लिए मन्दिर सभागार में गई तो उसकी लड़की ने चिल्लाना शुरू कर दिया और कहती रही कि " मेरी माँ दीक्षा ले रही है अतः मैं भी दीक्षा लूंगी।" उस समय बच्ची की दादी और साधुओं के लिए बहुत ही समस्या खड़ी हो गई। जब तक उसकी माँ दीक्षा में रही तब तक उसे बड़ी मुश्किल से ३-४ घन्टे सांत्वना देते रहे। दीक्षा के उपरान्त जब उसकी माँ बाहर आई तो बच्ची मां के गले से लिपट गई और बोली मैं भी दीक्षा लेना चाहती हूँ और फिर से रोना शुरू कर दिया। उनका पूरा परिवार ही भक्त है। बच्ची की मां ने उसे एक वरिष्ठ संन्यासी की ओर जाने को बोला। उस बच्ची ने उन संन्यासी को पकड़कर रोना और तंग करना शुरू कर दिया। तब वरिष्ठ संन्यासी ने उसे सांत्वना देते हुए उसकी मां से कहा तुम मेरे साथ पूज्य महाराजजी के पास चलो और उन्होंने पूज्य महाराजजी से सारा वृतान्त कहा। तब उस बच्ची ने चिल्लाना तो बन्द कर दिया लेकिन रोती रही। महाराज ने उसे एक सुन्दर सूखे मेवे का पैकट दिया लेकिन उसने उसे लेने से मना कर दिया। महाराज ने अपना हाथ उसके सिर पर रखा तो उसने दुबारा दीक्षा लेने का हठ किया। फिर महाराज ने उसे स्नेहपूर्वक पूछा कि वह दीक्षा क्यों लेना चाहती है ? लड़की ने जबाब दिया कि यदि आप मुझे दीक्षा दोगे तो मैं भगवान (भगवद साक्षात्कार) को देख सकती हूँ और भगवान मेरे सामने आएंगे। महाराज ने पुनः अपना हाथ उस लड़की के सिर पर रखते हुए उसकी माँ को बुलाया जो वहीं खड़ी थी और उसे कहा कि मैं इसे दीक्षा एक शर्त पर दे सकता हूँ, तुम्हें (बच्ची की माँ को) जब तक

बच्ची मन्त्र अच्छी तरह से उच्चारण करना न सीख जाए और भगवान श्रीरामकृष्ण के बारे में न जान ले, तब तक उसके लिए जप करना होगा। उसकी माँ ने कहा कि वह ऐसा ही करेगी। उसकी माँ आज विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष है तथा वह बच्ची अब युवती हो गई है और वह अपने गुरु को महान आदर देते हुए अध्ययन एवं साधना में पूर्णतया नियमित है।

एक बार पूज्य महाराज का उड़ीसा में दीक्षा कार्यक्रम था उसमें मैं भी शामिल था। एक युवा दम्पति ने पिछले वर्ष महाराज से दीक्षा ली थी वे किन्हीं कारणों से परेशान थे। वे पूज्य महाराज से मिले और उन्हें अपनी समस्या बड़ी विनम्रता से बतलाई। महाराज ने उनकी सभी समस्याओं को शान्ति से सुना और उन्हें निर्देश देते हुए जो कहा वह सब मुझे भी सुनाई दिया कि "जप करो", "जप करो", और श्रीरामकृष्ण वचनामृत पढ़ो। इसी से तुम्हारी सारी समस्याएं सुलझ जाएगी। उनके चेहरे से लग रहा था कि वे काफी सन्तुष्ट थे।

जब वे श्री रामकृष्ण मठ एवं मिशन के उपाध्यक्ष थे तब उन्होंने भगवान श्रीरामकृष्णदेव के बहुत से मन्दिरों की प्राण प्रतिष्ठा एवं उद्घाटन किये। इन कार्यक्रमों में मुझे भी सम्मिलित होने का सौभाग्य मिला। एक समय पूज्य महाराज बिलासपुर में मन्त्र दीक्षा दे रहे थे। उस समय बिलासपुर में महाराज के लिए रहने की सही व्यवस्था नहीं हो पाई लेकिन पूज्य महाराज ने उदारतापूर्वक समरसता बैठा ली और किसी प्रकार की कोई भी शिकायत नहीं की। उन्होंने बिलासपुर के श्रीरामकृष्ण देव के सार्वजनिन मन्दिर की प्रतिष्ठा की और इसी प्रकार भिलाई के मन्दिर की भी प्राण प्रतिष्ठा की तथा सैंकड़ो लोगों को मन्त्र दीक्षा दी।

एक बार पूज्य महाराजजी से पखांजूर (एक बंगाली शरणार्थी बस्ती), जो कि उस समय छतीसगढ़ के बस्तर जिले में था, वहां सैकड़ों भक्तों ने दीक्षा ली। मैं भी पूज्य महाराज के दल में था।

वहाँ हम चार दिन रूके। एक संयुक्त परिवार की वृद्धा माता और उनके १०-१२ घर के सदस्यों ने दीक्षा ली। वृद्धा माता ने महाराज से प्रार्थना की कि वे उनके पास के गांव में घर पर पधार कर धन्य करें। वे गरीब थे। लेकिन उसने हर तरह से प्रयास किया। अगले दिन दीक्षा नहीं थी अतः महाराज बोले कि वह इतना बार बार कह रही है तो उसके घर जाना चाहिए। लगभग ४-५ संन्यासी और २-३ स्थानीय भक्त अपरान्ह उसके घर गये। वे एक छोटी झोपड़ी, जो घर जैसी थी उसमें रहते थे। वहाँ हमारे लिए बैठने की कोई जगह नहीं थी। पूरा परिवार प्रसन्नता से किंकर्त्तव्यविमूढ़ था। फिर उस वृद्धा माता ने पूज्य महाराज को हाथ पकड़कर कहा, “बाबा कृपया भीतर पधारिए और अपनी चरण धूलि से हमारा घर पवित्र कीजिए। उन्होंने महाराज को एक बहुत पुरानी कुर्सी पर बैठाया। परिवार के सभी एवं निकट के पड़ौसियों ने महाराज को प्रणाम किया और बाहर आ गये। उसी समय कुछ और पड़ौसी और उनके मित्र आये। वहाँ बरामदे में कुछ चटाइयाँ बिछा दी गई। सभी उस पर बैठे। महाराज जी उसी पुरानी कुर्सी पर बैठे थे। वृद्धा माता और उनकी पुत्री तथा पुत्रवधु मुरमुरा, चिवड़ा, खीरा तथा नमक लाये। मुरमुरा एवं चिवड़ा दोनों ही ताजे थे। वृद्धा माता ने दादी अम्मा के समान सभी को खिलाया और पूज्य महाराज को कुछ ओर लेने को कहा। पूज्य महाराज ने बड़ी ही खुशी के साथ वृद्धा माता से थोड़ा और लिया। वृद्धा माता के खुशी से आंखों में आंसू आ गये और कहा महाराजजी थोड़ा और लीजिए।

हमारे नारायणपुर आश्रम में बहुत से आदिवासी लड़कों और लड़कियों ने मन्त्र दीक्षा ली। महाराजजी आदिवासी लोगों के कल्याण के लिए चिन्तित रहते थे। वे नारायणपुर के सभी गृही और संन्यासियों को उत्साहित करते थे। पखांजूर में एक दिलचस्प घटना हुई जहाँ एक बूढ़ी औरत सौ से ज्यादा भक्तों के संग दीक्षा ले रही थी। वह पण्डाल में पीछे बैठी थी। जब उसकी बारी

आई तो उसको बुलाया गया। स्वाभाविक था दीक्षा के समय आदरणीय महाराज पूछते है, “क्या तुम पढ़ सकती हो” उसने कहा वह निरक्षर है। महाराज ने उसे फिर कहा, “जो मैं कह रहा हूँ उसे सावधानी पूर्वक सुनो।” लेकिन उसके चेहरे पर ना कोई प्रतिकरण था ना ही कोई प्रतिक्रिया। एक अन्य बूढ़ी औरत उसके पास ही बैढ़ी थी उसने महाराज से कहा कि वह लगभग बहरी है। उसे सुनाने के लिए उसके कान के पास बहुत जोर से चिल्लाना पड़ता है। महाराज ने आयोजकों को डांटा, “तुम लोगों का क्या साक्षात्कार लेते हो ? आवेदन पत्रों की क्या जांच करते हो ?यहां एक बूढ़ी औरत जो पूर्णतया निरक्षर एवं पत्थर के समान बहरी है उसे कौन लाया है ? आयोजनकर्ता और महाराज के सेवक सकते में थे। आखिरकार महाराज ने कहा कि उस बूढ़ी औरत के पास जो उससे कम उम्र की औरत है उसे उसके पास बैठाएं। पूज्य महाराज ने उस बूढ़ी औरत के कान में ३ -४ बार बहुत जोर से बोला और उसे दोहराने के लिए कहा। भगवान की कृपा से सब सही ढंग से हो गया।

पूज्य महाराज निडर व्यक्ति थे। वे साहसी, शक्तिशाली और निर्भीक थे। जब वे सेवा प्रतिष्ठान में सचिव के पद पर पदस्थापित थे उस समय श्रमिकों ने अनुचित मांगे रखी। पूज्य महाराज ने उन्हें समझाया कि उनकी मांगे अनुचित्त है। पूज्य महाराज ने दृढ़ता एवं साहस से कहा, “हम तुम्हारी अनुचित मांगों को मानने के स्थान पर अस्पताल को बन्द करना उचित समझेंगे। सेवा प्रतिष्ठान कई महीनों तक बन्द रहा और महाराज अपने निर्णय से टस से मस भी नहीं हुए और अपने निर्णय पर अडिग रहे। आखिर में विरोधियों ने हार मान ली और अनुचित मांगों को छोड़ दिया। यह उनके महान व्यक्तित्व का बहुत बड़ा उदाहरण है।

ब्रह्मलीन पूज्य महाराज को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(अंग्रजी में प्राप्त इस लेख का हिन्दी अनुवाद ब्रह्मचारी निर्मल एवं डॉ. श्री गजेन्द्र सिंह मनोहर ने किया है।)

परमपूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी के संस्मरण

परम पूज्य स्वामी मुक्तिनाथानन्दजी महाराज
सचिव, रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, लखनऊ

मुझे अपने मुख्यालय बेलूड मठ में दो दशकों से अधिक समय तक पूज्य स्वामी गहनानन्द जी के पावन सान्निध्य में रहने का दुर्लभ संयोग प्राप्त हुआ था। सत्तर के दशक में मेरी उनसे प्रथम मुलाकात तब हुयी जब मैंने संघ में प्रवेश लिया था। पहली ही दृष्टि में मैंने उन्हें तीव्र मेधाशक्ति एवं गतिशील व्यवहार वाले विशिष्ट संन्यासी के रूप में पाया था। तदुपरान्त मैंने जाना था कि तब वे मठ के सबसे कम उम्र के ट्रस्टी एवं सेवा प्रतिष्ठान के प्रमुख थे।

उनके व्यक्तित्व की सबसे अहम विशेषता उनकी समचित्तता थी। कैसी भी परिस्थिति हो, वे हमेशा स्थिर रहते थे। एक उदाहरण के माध्यम से मैं इस बात की पुष्टि करना चाहूंगा। एक दिन रात को ट्रेन से वे पुरी जाने वाले थे। तब वे संघ के एक सह सचिव के रूप में संन्यासियों की तैनाती एवं स्थानांतरण का कार्य देखते थे, जिसकी वजह से अपने व्यस्त कार्यक्रम के बावजूद उन्हें अनेक केंद्रों का निरीक्षण करना होता था। यद्यपि ट्रेन के छूटने में बहुत कम समय रह गया था, महाराज बिना किसी हड़बडाहट शीघ्रता के साथ अपना सामान पैक कर रहे थे। उनके सेवक स्वामी जी अत्यधिक तनाव में होने के कारण आगे पीछे जा रहे थे। अंततः वे गुस्से में फट पड़े और महाराज से बोले कि उनके स्टेशन पर पहुंचने से पहले ही ट्रेन छूट जायेगी। अपना काम करते हुये महाराज बोले, “मुझे यात्रा करनी है या तुम्हें ?” यह सुनकर वहां उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति सन्न रह गया।

उनके जीवन की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि वे प्रत्येक समय बिना किसी तनाव के अपने काम में व्यस्त रहते थे। जब हम लोग पश्चिम बंगाल के बाली देवानगंज में राहत और पुनर्वास कार्यक्रम में लगे थे, वे हमारे कैम्प में आये और एक दिन के लिये ठहरे। वह व्यस्तता से भरा दिन था और दोपहर के भोजनोपरान्त वे अल्प समय के लिये विश्राम ले रहे थे। एक युवा ब्रह्मचारी के रूप में मैं धीरे से उनके कमरे में यह देखने के लिये घुसा कि वे ठीक से आराम कर पा रहे हैं या नहीं। किंतु भीतर यह देखकर मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही कि वे सेवा प्रतिष्ठान के वार्षिक सामान्य प्रतिवेदन का प्रूफ संशोधित कर रहे थे।

पूज्य महाराज एक आदर्श कर्मयोगी थे। हममें से जो लोग रात-दिन उन्हें बहुत निकट से देखते थे, उन्हें आश्चर्य होता था कि वे किस तरह एक साथ बहुविध क्रियाकलापों को सहास्य, सविवेक एवं सतर्क रहकर पूरा करते थे। उस समय वे रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन के बेलूड़ मठ स्थित मुख्यालय में एक सह सचिव और हमारे संघ के सबसे बडे अस्पताल रामकृष्ण मिशन सेवा प्रतिष्ठान के प्रमुख थे। यही वजह है कि वे पूरे दिन बहुत व्यस्त रहते थे, किंतु प्रायः रोज अपराह्न में सेवा प्रतिष्ठान का कार्य देखने के लिये वहाँ जाते थे और विभिन्न स्थानों पर वकीलों के साथ होने वाली बैठकों में हिस्सा लेने के लिये देर शाम वे बेलूड़ मठ वापस लौट आते थे। इन सबके होते हुये भी अपनी नित्य प्रातःकालीन आध्यात्मिक साधना के साथ मंदिर - संकुल में प्रणाम आदि के प्रति वे नियमित रहते थे।

उन्हें उस समय सुप्रीम कोर्ट में महत्त्वपूर्ण मामलों के सिलसिले में प्रायः नई दिल्ली जाना पड़ता था। हवाई अड्डे तक उन्हें छोड़ने के लिये जाते समय मैं देखा करता था कि वे इस समय चुप रहना पसंद करते थे, किंतु उनके पैरों पर पड़ी चद्दर के नीचे उनकी अँगुलियाँ धीरे.धीरे घूमती रहती थीं, जिससे पता चलता था

कि वे उस समय जप करते रहते थे। हम समझ सकते थे कि कैसे कार्य एवं पूजा साथ साथ चल सकते हैं।

वह एक सक्षम प्रशासक थे। सत्तरवें दशक के प्रारम्भ में सेवा प्रतिष्ठान में बहुत लम्बी हड़ताल हुयी थी। ऐसा लगता था कि सेवा प्रतिष्ठान को अनिश्चित काल के लिये बंद करना पडेगा। किन्तु सेवा प्रतिष्ठान के कार्यक्रम निरन्तर चलते रहे एवं कुछ दिनों के बाद हड़ताल समाप्त हो गयी और उसके उपरान्त हम लोग महाराज से मिलने गये। उन्होंने हमें बताया कि कैसे वह विभिन्न क्षेत्रों से पड़ने वाले असाधारण दबाब और हड़ताली कर्मचारियों के सबल विरोध के बावजूद बिना समझौता किये दृढ़ बने रहे एवं अस्पताल को चालू रखे रहे। अंततः विरोधी नकारात्मक शक्तियों को झुकना ही पड़ा और बिना प्रतिवाद किये उन्हें महाराज जी की शर्तों के अनुरूप समर्पण करना पड़ा।

पूज्य महाराज के पास धार्मिक कार्यो के लिए जबर्दस्त उत्साह था। रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के विस्तार हेतु वे सदैव उत्सुक रहते थे, फिर यह चाहे अतिरिक्त भूमि एवं भवन की खरीद हो या धन - संग्रह का उपक्रम हो या संन्यासी-सदस्यों की संख्या में वृध्दि हो या दूरस्थ क्षेत्रों में नवीन केन्द्रों को स्थापित करने की बात हो।

दिसम्बर १९८० में बेलूड़ मठ में रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के दूसरे महासम्मेलन के बाद तत्कालीन संघाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी वीरेश्वरानन्दजी महाराज ने रामकृष्ण-विवेकानन्द भाव प्रचार परिषद नामक केन्द्रीय संस्था की छत्रछाया में गृहस्थ भक्तों, श्री श्री ठाकुर-माँ और स्वामी जी की केन्द्रीय शिक्षाओं के अनुयायी संगठनों एवं रामकृष्ण संघ से बाहर के संन्यासियों को एक साथ लाने का विचार किया।

पूज्य स्वामी गहनानन्द जी महाराज ने भाव प्रचार संबंधी विभिन्न क्रिया-कलापों को संयोजित करके भावान्दोलन को संगठित

करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। परिणमतः पवित्र त्रयी के इर्द-गिर्द स्थानीय भक्तों को लामबन्द करके सुदूर क्षेत्रों में भी कई नये केन्द्र स्थापित किये गये। उनके मिशनरी उत्साह की तीव्रता को अनेक उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। संक्षिप्तता के लिए एक उदाहरण पर्याप्त है। उन दिनों श्रीमत् स्वामी रामकृष्णानन्द जी महाराज के पवित्र जन्म-स्थान मयाल इछापुर में जहाँ एक प्राइवेट आश्रम स्थापित किया गया था, उत्साहित भक्तों का एक छोटा समूह सक्रिय था। वे वार्षिक सम्मेलन किया करते थे, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में पूज्य महाराज को अनिवार्य रूप से आमंत्रित किया करते थे। अपने अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम के बावजूद पवित्र त्रयी के संदेश के प्रचार के लिए सारी असुविधाओं से युक्त थकाने वाली यात्रा करके महाराज उन सम्मेलनों में शरीक होते थे। ऐसे ही एक वार्षिक सम्मेलन में भाग लेने के लिए बरसात के मौसम में एक जीप द्वारा कई किलोमीटर तक गाँव के कच्चे रास्ते पर चलकर महाराज किसी तरह मयाल इछापुर पहूँचे, जहाँ भारी बरसात के बाद किसी अन्य वाहन से पहुँचना सम्भव नहीं था। उत्सव आरम्भ ही होने वाला था कि भारी वर्षा की पूर्व सूचना सदृश सारा आकाश बादलों से आच्छादित हो गया। आसन्न वर्षा के कारण फँस जाने के डर से जीप चालक ने वहाँ और अधिक रूकने से इन्कार कर दिया। किन्तु पूज्य महाराज शान्त बने रहे और ड्राइवर से कुछ किलोमीटर दूर सुरक्षित पक्की सड़क (तार रोड़) पर इंतजार करने के लिए कहकर तत्काल जीप को वापस भेज दिया। इसी बीच भारी वर्षा होने लगी किन्तु उत्सव कार्यक्रमानुसार चलता रहा। बाद में, किसी वाहन द्वारा जब उनके वापस लौटने की कोई सम्भावना नही बची, एक पालकी का इंतजाम किया गया, जिसमें महाराज को बिठाकर भक्तों द्वारा उन्हें अपने कन्धों पर उठाकर इस दूरस्थ स्थान पर ले जाया गया, जहाँ उनके इंतजार में जीप खड़ी थी। इस बीच महाराज अनुद्विग्न रहे, बल्कि श्री श्री ठाकुर

के प्रति अपनी विनम्र सेवा के प्रतीक के रूप में उन्होंने कष्टकर एवं खतरनाक यात्रा का मुस्कुराते हुए लुफ्त उठाया। वहाँ उपस्थित सभी जन उनकी उल्लेखनीय भावना और साहसिक दृष्टिकोण को देखकर आश्चर्य चकित रह गये।

पूज्य महाराज संन्यासी-सदस्यों के वेष एवं व्यवहार के प्रति बहुत सतर्क थे और इस संबंध में किसी लापरवाही पर बहुत नाराज होते थे। वह स्वयं के जीवन-व्यवहार द्वारा सबके समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करते थे। कमीज को ठीक न पहनने जैसे मामूली मामले भी उनकी अन्तर्भेदी दृष्टि से ओझल नहीं होते थे। बिना बटन लगाये कमीज पहने हुए देखकर वे हमें इशारे से तुरन्त सारे बटन लगाने का निर्देश देते थे। इसीलिए उनके पास जाते समय हम बहुत सावधान रहते थे। वह कहते थे कि संन्यासियों को हर समय अत्यधिक सावधान रहना चाहिए और यह उनके जीवन-व्यवहार में प्रतिबिम्बित होना चाहिए। एक बार जब मैं ब्रह्मचारी था, मंदिर में प्रवेश करने से पहले अपने जूतों को मैंने अव्यस्थित तरीके से रख दिया। मैंने ध्यान नहीं दिया कि पूज्य महाराज चुपचाप मेरे पीछे आये। बाद में, उन्होंने मुझसे कहा कि बाहर जूतों को देखकर ही मैं जान गया था कि ये किसके जूते हैं।

मैं बहुत शर्मिन्दा हुआ और बिना कुछ बोले अपना सिर झुका लिया। किन्तु इस घटना के बाद मैंने जीवन भर के लिए बिना चूके अपने जूते सही हालत में रखने का पाठ सीख लिया। बिना डाँटे हुए हमें प्रशिक्षित करने का ऐसा ही उनका तरीका था।

बहुत काल बाद संघ के एक उपाध्यक्ष के रूप में मंत्र दीक्षा प्रदान करने हेतु वे जब लखनऊ पधारे, वहाँ मैं सचिव के रूप में कार्यरत था। गैर-चिकित्सकीय पृष्ठभूमि के कारण मैं चिकित्सा क्षेत्र में चिकित्सकों की लापरवाही को नियंत्रित करने में असहज महसूस कर रहा था। मैं यह जानने के लिये उत्सुक था कि कैसे सेवा प्रतिष्ठान के प्रमुख के रूप में महाराज वहाँ कार्यरत कुशल

चिकित्सकों के साथ व्यवहार करते थे। मैंने उनसे पूछा, ''महाराज, क्या सेवा प्रतिष्ठान के डाक्टरों को नियंत्रित करने के लिये आपने किसी सक्षम चिकित्सा अधीक्षक को नियुक्त किया था ?'' महाराज मुस्कुराये और प्रश्न सूचक भाव से तुरंत बोले, ''क्यों ?, मैं गैर-चिकित्सा अधीक्षक था। (I was the Non-Medical Superintendent).

मैं उनके इस आश्चर्यजनक उत्तर को सुनकर स्तब्ध रह गया और इसके निहितार्थ को समझने के लिये मुझे कुछ समय लगा। कालांतर में मुझे चिकित्सकों के साथ व्यवहार करने में कोई कठिनाई नहीं हुई और इस आश्चर्यजनक सुझाव के लिये मैं सदा के लिये उनका ऋणी हूँ।

वे अत्यधिक विनोदप्रिय भी थे। एक बार जब वे उत्तर २४ परगना जनपद में एक राहत शिविर का निरीक्षण कर रहे थे, हम लोग रात्रि-विश्राम के लिये सिकरा कुलीनग्राम आश्रम में रुके। ज्यों ही हम वहाँ पहुँचे, उपस्थित स्थानीय भक्तगण अतिथि-सत्कार के लिये बहुत उतावले होने लगे। उनमें से कुछ ने कहा, "महाराज, बेहतर होगा कि अब आप विश्राम करें।'' किंतु पूज्य महाराज हँसते हुये बोल, "हम लोगों ने यहाँ कुछ भी परिश्रम नहीं किया, अतः अभी विश्राम का प्रश्न ही पैदा नहीं होता।'' उनके इस वाक्य में निहित अर्थ को समझने में हमें कुछ वक्त लगा। तब उन्होंने स्वयं ही इसे स्पष्ट किया कि हमें सर्वप्रथम अपने भोजन ग्रहण करने के कार्य में लगना चाहिये, तभी विश्राम करने की नौबत आयेगी। यह सुनते ही हम सब जोर से हँस पड़े।

वास्तव में, पूज्य महाराज जी मानों अपने गहन अंतर में छिपे आनंद के नित्य निर्झरित फव्वारे के साथ सदा सम्पर्क में थे, जिसके कारण वे जीवन की चुनौतियों का परिपूर्णता के साथ सफलतापूर्वक सामना करने में सक्षम हुये थे। उनका नाम उनके व्यक्तित्व का सच्चा प्रतिनिधि था।

कुछ स्मृतियाँ

परम पूज्य स्वामी सत्यदेवानन्दजी महाराज
अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, मुम्बई

परम पूजनीय महाराजजी के साथ मेरा परिचय सर्वप्रथम राँची, मोराबादी आश्रम में हुआ था। सम्भवतः १९७४ या ७५ का समय रहा होगा। उस समय मेरा १ साल हुआ होगा जब मैं रामकृष्ण संघ में संन्यास जीवन की इच्छा से आया था। उनके निकट जाने का साहस नहीं जुटा पाता था। अन्य महाराजगणों से उनके विशाल व्यक्तित्व की बातें सुनकर उनके प्रति एक श्रद्धा का पोषण मेरे मन में प्रारम्भ से ही था। वे रामकृष्ण मठ एवं मिशन के प्रन्यासी और कोलकाता, रामकृष्ण मिशन सेवाप्रतिष्ठान के सचिव भी थे।



१९८० साल में मैं ब्रह्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र में आया। दो साल के बाद जब प्रशिक्षण अवधि समाप्त हुई, स्थानान्तरण के लिए

प्रतिक्षा में था, एक दिन मुझे सूचना मिली, 'तुम प्रधान कार्यालय में पूजनीय स्वामी गहनानन्दजी से मिलो।' पूजनीय महाराजजी उस समय साधु लोगों के स्थानान्तरण एवं पदस्थापन विभाग के प्रभारी थे। उनके कार्यालय में जब मिला तो वे बोले, 'आज शाम को तुम्हारा सामान लेकर मेरी गाड़ी में चलना।' पूजनीय महाराजजी को प्रणाम करके प्रशिक्षण केन्द्र में आ कर अपना सामान व्यवस्थित कर बाँध लिया और उनके बताए समयानुसार गाड़ी में बैठ कर उनके साथ सेवा प्रतिष्ठान पहुँचा। उस समय वहाँ जितने संन्यासी थे, वे सभी मुझसे आयु में बड़े थे, मेरा समकालीन कोई भी ब्रह्मचारी वहाँ पर नहीं था और उन सबके बीच मेरी अवस्था बिन पानी के नदी किनारे आ पड़ी मछली के समान थी।

पूजनीय महाराजजी रात्रि भोजन के पश्चात मुझे बुलाकर बोले, 'मैं जब पहली बार सेवा प्रतिष्ठान आया तो पूजनीय दयानन्दजी ने मुझसे कहा था, साधु निवास के पीछे की ओर इंगित करते हुए, 'इस तरफ ज्यादा ध्यान न देना। मेरा तुम्हें भी यही निर्देश है, उस ओर ध्यान न देना।' जो लोग सेवा प्रतिष्ठान में रहे हैं वे सभी जानते हैं, प्रायः प्रतिदिन रात्रि में उस तरफ की बस्तियों से कितना शोर-शराबा और हंगामा होता रहता है और बहुत सी अप्रयोजनीय घटनाएं भी घटित होती रहती हैं। तीन महीनों तक सेवा प्रतिष्ठान में था, पूजनीय महाराजजी को बहुत ही पास से देखने का अवसर मिला, उनके व्यक्तित्व पर मैं तो जैसे मुग्ध ही था। उन्हें कभी गुस्सा करते नहीं देखा। खूब धैर्य धारण कर सभी की बातों को वे सुनते, सहज ही कोई विचारणिय बिन्दु पर अपना मत देने में शीघ्रता नहीं करते थे। उस विचार पर अच्छी तरह सभी के मत-मतान्तरों को सुनते और अपना विचार रखते, बहुत ही कम शब्दों में सक्षम वार्तालाप के धनी थे।

पूजनीय महाराजजी ने मुझे एक दिन बुला कर पूछा, 'तुम अस्पताल की लेबोरेटोरी का सुपरविजन कर सकोगे ?' मैंने दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना पूर्वक कहा, 'महाराज आप कृपापूर्वक अन्य

कोई आश्रम में मुझे स्थानान्तरित कर देते तो अति कृपा होगी। यहाँ सभी वरिष्ठ संन्यासियों के बीच मेरा कोई ब्रह्मचारी भाई-बन्धु नहीं होने से असुविधा का सामना करना पड़ रहा है।' उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। किन्तु मेरी व्यथा को उन्होंने बड़े ही मनोयोग से सुना और मुझे अपने कमरे में जाने को बोला। शाम को ४ बजे मुझे बुलाकर बोले, 'अपना सामान बाँध कर तैयार कर लो और गाड़ी में रख दो।' उनके साथ गाड़ी में बैठा और शाम को लगभग ७ बजे रामकृष्ण मिशन, सारदापीठ के दरवाजे पर रोकने को बोले और मुझे बोले - 'यहाँ उतर जाओ और जयराम महाराज को बोलो मैंने तुम्हे भेजा है।' वहीं से मेरा रामकृष्ण मिशन, सारदापीठ में नया जीवन शुरू हुआ।

इसके पश्चात १२ साल बीतने पर मैं त्रिपुरा के आमतली, रामकृष्ण मिशन में था। पूजनीय महाराज तब संघ के उपाध्यक्ष के पद पर आसीन थे। आमतली आश्रम में मन्त्र-दीक्षा का आयोजन हुआ। पूजनीय महाराजजी आमतली आए। दूसरे दिन दीक्षा का अनुष्ठान होना था। मुझे दीक्षा-अनुष्ठान हेतु आए साधुओं के साथ पूजा इत्यादि के प्रबन्ध हेतु निर्देश दिये। मैं भी महा आनन्द के साथ इसी काम में जुट गया।

पूजनीय महाराजजी की दीक्षा-दान की पद्धति में समय बहुत लगता था। वे जितना हो सकता दीक्षार्थियों के साथ अपना समय बिताना पसंद करते थे। उनके विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के उत्तर दिया करते थे। एक ही प्रश्न बार-बार करने पर भी वे परेशानी अनुभव नहीं करते थे। हम लोग जो उनके पास आवश्यकतानुसार कार्य हेतु दीक्षानुष्ठान में सहभागी होते, तो ऐसे प्रश्नों को बार-बार सुनकर झल्लाहट सी अनुभव होती थी, परन्तु वे निर्विकार से हँसमुख अभिव्यक्ति के साथ प्रश्नों के उत्तर दिया करते।

किसी समय उनके समकालीन संन्यासी गुरुभाई के मुख से दीक्षा में लगने वाले समय के बारे में रहस्योद्घाटन करते हुए बोलते हैं, 'मैं दीक्षार्थियों के साथ अधिक से अधिक समय व्यतीत

करने की चेष्टा करता हूँ, कारण कि जीवन में फिर से कभी वे मुझसे मिल पाएंगे या नहीं, परन्तु मेरे साथ बिताए गए समय को वे चिर दिनों तक स्मृति पटल पर बनाए रख पाएंगे। पूज्य महाराजजी ने ऐसे विभिन्न दूर दराज के स्थानों पर भी भ्रमण किया जहाँ जाना दुःसाध्य होता और वहाँ पर आध्यात्मिक जिज्ञासुओं को सहज ही वे अपनी रामकृष्ण रूपी आध्यात्मिक सम्पदा वितरित कर आते थे। यह बात सही ही थी क्योंकि मन्त्र दीक्षा के बाद जीवन में दोबारा अपने गुरुदेव का दर्शन कईयों ने नहीं किया था और उनके साथ बिताए हुए ये कुछ पलों की अंकित गुरुदेव की स्मृति ही उनका सम्बल बनती है और अध्यात्म पथ में उत्साहित करती है।

परम पूजनीय महाराजजी के पाद्पद्मों में यह छोटी सी स्मृतिरूपी पुष्पांजलि समर्पित करते हुए अपनी लेखनी को विराम देता हूँ।



एक महान कर्मयोगी की मधुर स्मृतियाँ

परम पूज्य स्वामी निखिलेश्वरानन्द
अध्यक्ष, रामकृष्ण आश्रम, राजकोट

पूज्य स्वामी गहनानन्दजी महाराज का सामीप्य पाने का मेरा सौभाग्य रहा। वैसे तो वे अपने जीवन में स्वामी विवेकानन्दजी द्वारा बताए गये चारों योगों का ही अभ्यास करते थे परन्तु मेरी दृष्टि में वे एक महान कर्मयोगी थे। उन्हें देख कर कोई भी यह सीख सकता है कि कैसे इतने कार्यों की व्यस्तता के बीच शान्त और सौम्य रहा जा सकता है।

मेरा उनके साथ जब सम्पर्क हुआ तब वे रामकृष्ण मठ और मिशन के सह महासचिव के कार्य भार के साथ ही साथ रामकृष्ण मिशन के सबसे बड़े अस्पताल रामकृष्ण मिशन सेवा प्रतिष्ठान के सचिव पद का भी भार सम्भाल रहे थे। उस समय मैं राँची केन्द्र से बेलूड़ मठ आया था और मुझे उन्हीं के अधीनस्थ सम्पत्ति एवं विधि विभाग के अन्तर्गत कार्य करने का सौभाग्य मिला। उनके साथ बहुत बार बेलूड़ मठ से कोलकाता जाना होता था। वे रामकृष्ण मिशन के प्रधान कार्यालय में प्रातःकालीन सत्र में अपना कार्य समाप्त कर रामकृष्ण मिशन सेवाप्रतिष्ठान अस्पताल जाते और दोपहर का भोजन कर वहाँ अपने अस्पताल कार्यालय में आ जाते और मैं कोलकाता के कार्यों के लिए निकल पड़ता। वे अथक परिश्रम करते थे। सन्ध्या समय उनके साथ बहुत बार कानूनी सलाह हेतु वकीलों से मिलने के लिए भी जाना होता था। रात्रि १० या १०.३० बजे हम लौटते। वे सर्वप्रथम माँ के मन्दिर प्रणाम करते और उसके पश्चात ही ११ बजे के आसपास ही हम लोगों का रात्रि भोजन होता। वे अल्पाहारी ही थे। अपनी आँखों से

देखता कि बहुत ही अल्प भोजन लेते और उसके बाद कार्यालय में फिर से उनके कार्य का रात्रि सत्र आरम्भ हो जाता। वे एक-एक करके उनसे मिलने की अपेक्षा में बैठे हुए विभिन्न केन्द्रों के प्रभारी संन्यासियों से उनके कार्यों में आने वाली समस्याओं पर विस्तार में चर्चा करते, क्योंकि सुबह के कार्य-सत्र में मिलने वाले आगन्तुकों का तो ताँता ही लगा रहता था और किसी भी कार्य पर गम्भीर विचार करना असम्भव ही होता। उदाहरण के लिए यहाँ उल्लेख करने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी, एक बार एक कार्य के लिए मुझे उनसे बहुत ही विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता हुई। उन्होंने भी सहमति जताई पर कहा कि उस समय आना जब वे कुछ फुर्सत में बैठे हों। मैंने भी उनसे समय लिया तो वे बोले रात्रि में १२:३० बजे। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ! मुझे लगा कि कहीं मैं उनके विश्राम में बाधा तो उत्पन्न नहीं कर रहा ! सुबह से शाम तक वे कार्यों में लगे हैं और रात्रि में जा कर चर्चा करना कहीं मुझसे कोई गलती तो नहीं हुई कि उनसे अलग से समय माँग लिया ! मुझे हिचकिचाहट सी हुई किन्तु उन्होंने समय दिया है तो जाना तो होगा ही। मैं जब उनके कार्यालय में पहुंचा, तो यह देख कर दंग रह गया कि उन्होंने बहुत से संन्यासियों को वहाँ १२:३० बजे रात्रि में आने के लिए बोल रखा है। एक लम्बी कतार ही लगी पड़ी है उनसे मिलने के लिए। मैं भी इसी कतार का हिस्सा था। और जब मेरा उनसे मिलने के लिए समय आया उस समय घड़ी में १.३० बज रहे थे। उनके कार्यालय में उनके साथ सभी कानूनी समस्याओं पर विस्तार से चर्चा हुई, देर रात्रि कार्य करने पर भी उनके मुख मण्डल पर कोई भ्रू-क्षेप, थकान इत्यादि देखने को नहीं था। मैं उनके कार्यालय से रात्रि २ बजे लौटा। अगले दिन जब मैं मन्दिर से जप-ध्यानादि समाप्त कर आ रहा था तब देखा कि उनका दरवाजा खुला था। पता नहीं कब वे निद्रा-विश्रामादि करते हैं !यह सोच कर भी आश्चर्य होता था। उनकी साधना में कर्मयोग की ही प्रधानता

देखने को मिलती थी। इतनी व्यस्तता के बीच, कार्यों की बहुलता से उनके मुखमण्डल पर प्रकाशित उस शान्ति वितरित करने वाली मुस्कान को कभी धूमिल होते हमने नहीं देखा। उनका यह गुण मुझे स्वामी विवेकानन्दजी का उपदेश याद दिलाता है, वे कहते हैं कि जितने शान्त होकर हम कार्य करते हैं, उतने ही हमारे स्नायुओं का क्षय कम होता और हम कम विचलित होते हैं और जितना हम कार्य को प्रेमास्पद को समर्पण के भाव से करें उतना ही कार्य भी उत्तमोत्तर होता जाता है। स्वामी विवेकानन्द के इन उपदेशों का वे जीता जागता उदाहरण थे। वे सब समय शान्त बने रहते थे, उन्हें कभी भी किसी पर चिल्लाते और गुस्सा करते नहीं देखा गया। ज्यादा से ज्यादा वे अपनी अप्रसन्न दृष्टि से सम्मुख व्यक्ति को अपनी असहमति दिखा देते थे, और उनका यही अनुशासन हम सभी के लिए पर्याप्त होता था। कभी-कभी हमारे प्रस्तावों पर उनकी सहमति नहीं होती थी, ऐसी परिस्थिति में भी वे चिल्लाना, झल्लाना और गुस्सा करना जैसा कोई भी भाव धारण न करते हुए अपनी संचित शक्तियों को सृजनकारी बना लेते थे और यही कारण था कि वे श्रीश्रीरामकृष्णदेव के अधिकाधिक गुरुत्तर कार्यों का दायित्व भार ले पाते थे और सौम्य मूर्ति हो अपनी साधना में अग्रसर होते।

जब वे उपाध्यक्ष हुए तक भी मेरा उनके साथ सम्पर्क बना रहा। वे यह जानकर प्रसन्न हुए कि मैं युवाओं के बीच जाता रहता हूँ, उनकी समस्याओं को सुनता हूँ, उनको स्वामी विवेकानन्दजी के बताए उपदेशों के अनुसार सलाह भी देता रहता हूँ, उनके प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करता हूँ। उन्होंने बड़ी उत्सुकता दिखाई जब उन्हें पता चला कि मैं बहुत से युवा सम्मेलनों का भी नियमित आयोजन कर हजारों युवकों से निरन्तर सम्पर्क में बना रहता हूँ। एक बार हम गाड़ी में एक साथ जा रहे थे, तब उन्होंने मुझसे इस सम्पर्क में विस्तार से चर्चा की। युवाओं की समस्याओं पर मेरे वक्तव्य को जाना और मुझे सलाह

दी कि युवाओं को कठोर अनुशासन के स्थान पर उनके साथ मित्र बन कर उनकी सहायता करने से उनको अधिक लाभ होता है। युवकों को ऐसे समय में इसकी सर्वाधिक आवश्यकता रहती है। मेरे कार्यों पर उनकी विशेष कृपा हुई उन्होंने मुझे सराहा और बहुत प्रोत्साहन भी दिया जिससे मेरे स्वयं के संशयों का भी निवारण हो गया, मुझे अब यही अनुभव हुआ कि मेरा युवाओं के बीच स्वामी विवेकानन्द की वाणी का प्रचार-प्रसार और उनके सम्पर्क में बने रहना ही साधना है। मेरे इस कार्य में बहुतों ने असहमति भी दिखलाई थी परन्तु उनके आशीर्वाद ने मुझे पूरे मनोयोग से इसी कार्य में प्रोत्साहित किया। इससे प्रेरित हो मेरे कार्य में तीव्रता आ गयी और बहुत से युवा-सम्मेलनों पर कार्य आरम्भ हुआ। बेलूड़ मठ पहुँच कर उनसे भेंट करने पर उनकी दूर-दृष्टि देख कर तो मैं अवाक् ही हो गया। उन्होंने इन सभी कार्यक्रमों की रिपोर्ट भी तैयार करने को कही जिसमें कितने इस प्रकार के सम्मेलनों का लाभ ले पा रहे हैं, उनके नाम पते भी मुझे नत्थी करने होंगे, उनके विचारों का एवं उनमें आने वाले परिवर्तनों का भी मुझे अब व्यवस्थित कार्यालयीन प्रभार लेना होगा। सभी कार्यक्रमों की विस्तारित सूचना अब मुझे उन्हें भेजनी होती थी जिसने मेरे कार्यों के नए आयामों का विकास किया। यह एक प्रकार से उचित ही था। मेरे पास सभी प्रकार की जानकारी तो थी ही किन्तु इस प्रकार व्यवस्थित कर एक रिपोर्ट के रूप में पूर्व में किए सभी कार्यों का कभी विश्लेषण नहीं किया गया था, पर यह अवसर भी मेरे लिए बड़ा ही प्रेरणादायी रहा था। उन्होंने मेरे व्याख्यानों एवं सम्मेलनों का विवरण उनके द्वारा चाहे गए प्रारूप में प्राप्त होने पर मुझे एक आशीर्वाद स्वरूप प्रशंसा पत्र भी प्रेषित किया और कहा कि यह कार्य बहुत ही सराहनीय है और वे श्रीश्री रामकृष्णदेव, माँ सारदादेवी और स्वामी विवेकानन्दजी से इस कार्य में सफलता हेतु प्रार्थना करते हैं, उनका शुभाशीर्वाद बना रहे। इसी प्रकार उनका आशीर्वाद प्राप्त कर मैं

निश्चिन्त हुआ, और भी अनेक अवसरों पर मुझे उनके सान्निध्य का लाभ प्राप्त हुआ।

एक बार मैं रायपुर किसी कार्यवश गया, देखा कि वहाँ अचानक मुझे मन्दिर से बुलावा भेजा गया, पता चला कि वे आए हुए हैं और मन्त्रदीक्षा के पश्चात मेरा भी उन्हें प्रणाम करने का सौभाग्य हुआ, उन्होंने श्रीश्री माँ के पवित्र स्मृति चिन्ह मेरे माथे पर स्पर्श कर विशेष कृपा से धन्य किया। उस दिन मैंने उनसे कोई आग्रह भी नहीं किया था किन्तु उन्होंने स्वयं ही मुझे बुलवा लिया और अनुग्रहित किया।

मुझे याद है जब वे, शायद वर्ष १९८९ में महासचिव के पद पर थे, उस समय मैं राजकोट आश्रम में था। उस समय मेरे लिए कठिनाईयों की कमी न थी। एक ओर मुझे गुजराती मासिक पत्रिका का शुभारम्भ करना था तो दूसरी और उसका सम्पादन, प्रचार एवं प्रसार और आवश्यक धन सामग्री जुटाने का कार्यभार भी मेरे उपर ही था। उस समय कोई संन्यासी सहायक तो दूर की बात है कोई अन्य कर्मचारी भी न था जो मुझे इन कार्यों में मदद करता। इन सभी गुरुत्व पूर्ण कार्यों के साथ-साथ मुझ पर मैनेजर का कार्य भार भी था। कोई भी संन्यासी वहाँ नियुक्त न था। मुझे दोहरी भूमिकाओं में कार्य करना पड़ रहा था। एक दिन तो ऐसा लगा कि और कार्य कर नहीं सकूँगा, दिन-रात परिश्रम करने पर भी सभी दायित्वों का निर्वाह करना मेरे लिए असम्भव सा प्रतीत हो रहा था। मैंने उन्हें फोन किया और अपनी समस्याएं बतलाई, उनसे कहा कि कुछ करें, कोई एक संन्यासी भाई को मेरे कार्य में सहायता हेतु भेज दें। उन्होंने बड़े ही शान्त और धीमे स्वर में कहा -'प्रबुद्ध'- वे मुझे स्नेहपूर्वक 'प्रबोध' के स्थान पर 'प्रबुद्ध' कह कर बुलाते थे। 'स्वामीजी की ओर देखो, उन्हें सर्वदा स्मरण रख कर कार्य करो', और ऐसा कह कर फोन रिसीवर रख दिया, और यह उनका समाधान करना हो गया। फिर से नई स्फूर्ति के साथ मैंने एकाकी ही बिना किसी

सहायक के कार्य करना आरम्भ किया, शायद उनके इन शब्दों से शक्ति संचार हुआ होगा या कहें कि उनका आशीर्वाद ही था जिसने फिर से मुझे प्रेरित किया और मेरी परेशानियाँ दूर हो गयीं।

उनके संघाध्यक्ष बनने के बाद भी उनका पुण्याशीर्वाद मुझे मिलता रहा।

वे एक महान कर्मयोगी ही थे जो गहन कर्म में भी शान्त, धीर और सौम्य स्वरूप में लीन रहते थे। उनके इस महत्तर जीवन के साथ मेरी स्मृतियाँ मुझे हर पल उनके द्वारा मार्गदर्शित कार्यों में प्रेरणा देती रहती है। वे अपने शुभाशीर्वादों से मुझे अपने द्वारा चाहे मार्ग में अग्रसर करते रहेंगे। इन्हीं प्रार्थनाओं के साथ,

ऊँ शान्ति।।

(राजकोट से भेजे गए विडियो संस्मरणों को स्वामी तत्परानन्दजी ने अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद कर यहाँ प्रस्तुत किया गया है।)

संस्मरण संदेश

परम पूज्य स्वामी ईशात्मानन्दजी महाराज
मिनिस्टर इन्चार्ज, विवेकानन्द वेदान्त समिति, शिकागो

३१ दिसम्बर २०१७

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि रामकृष्ण आश्रम, बीकानेर रामकृष्ण संघ के चतुर्दश संघाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी महाराज की स्मृति में एक स्मारिका रूपी ग्रन्थ 'गहन आनन्द चिन्तन' प्रकाशित करने जा रहा है। मेरी पूज्य महाराजजी के साथ प्रथम भेंट चिरस्मरणीय अवश्य ही रही पर मेरे अन्तर्मन पर आज भी लज्जा भरी मुस्कान रहे बिना नहीं रहती। सन् १९७६ की बात है, जब वे मेघालय राज्य में स्थित चेरापूँजी रामकृष्ण आश्रम पधारे थे। उनके आने के कुछ महिनों पूर्व ही संन्यासी होने की इच्छा से मेरा वहाँ आना हुआ था।

नया नया होने की वजह से मुझे रामकृष्ण संघ के संन्यासियों की एवं संघ की प्रशासनिक व्यवस्था के बारे में भी जानकारी नहीं थी। रामकृष्ण आश्रम, चैरापूँजी के तत्कालीन सचिव ब्रह्मलीन स्वामी गोकुलानन्दजी महाराज ने आश्रम के प्रवेश द्वार की चौखट से सम्बन्धित चल रहे लकड़ी के काम को कर रहे कारीगरों के काम की देखरेख का कार्य मुझे सौंपा था। इसी कार्य को करने वाला कारीगर किसी कारणवश उस दिन उपस्थित नहीं था और सन्ध्या होने को आ रही थी, काम रूका होने की वजह से मुझे बड़ी ही झुंझल्लाहट हो रही थी, तब क्या करता, स्वयं ही कुछ कील और एक हथौड़ी लेकर बांस की सीढ़ी लगाकर, उस पर चढ़ा और अपने दिमाग में जैसा उचित जान पड़ा, ठोंकने लगा, पर थोड़ी ही देर में पहली बार जीवन में समझ में आ गया कि कारीगर की हैसियत से बांस की सीढ़ी पर चढ़ कर किया जाने वाला ये सरल सा दिखने वाला कार्य इतना आसान नहीं था, कम

से कम मेरे लिए तो चुनौतिपूर्ण था। अन्धेरा होने में देर न थी पर मैं भी शाम होने से पूर्व उस कार्य को करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हो जुटा रहा, अपनी ओर से बहुत ही अच्छे ढ़ंग से करने पर भी मेरी कमर और कन्धों में दर्द का अहसास इस कार्य को जटिल बना दे रहा था और मुझे भी नौसीखिए कारीगर के समान मन ही मन झुंझलाहट का सामना करना पड़ रहा था। उसी समय एक गाड़ी वहाँ आकर रुकी और उसमें से आने वाली एक मधुर वाणी ने मुझसे प्रश्न किया 'अरे, तुम यहाँ क्या कर रहो हो?' मैं तो पहले से ही कारीगर के न आने के कारण परेशान था, इसलिए झुंझलाहट भरे शब्दों में उत्तर दिया, 'देख नहीं रहे हो, यहाँ सीढ़ी पर चढ़ कर बाजार कर रहा हूँ'। वो मुस्कुराए और गाड़ी आश्रम के भीतर चली गयी।

प्रवेशद्वार पर जब मैंने अपना काम समाप्त कर लिया तो हथौड़ी, बांस की सीढ़ी और सब सामान बगल में दबा कर जब आश्रम में आया तो आश्रम की चहल-पहल देख कर मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ। मैंने अपने साथी ब्रह्मचारी भाई को पूछा, भाई, आज इतनी साज-सज्जा क्यों? उसने बताया कि कोई वरिष्ठ संन्यासी बेलूड़ मठ से आए हैं। मुझे उनसे मिलने की इच्छा हुई तो उन ब्रह्मचारी महाराज ने बताया कि रात्रि प्रसाद के बाद सभी उनके कक्ष में जाकर मिल पाएँगे और तभी बातचीत हो पायेगी। मैंने इन वरिष्ठ संन्यासी को देखने के लिए बड़े ही धैर्य से प्रतीक्षा की।

जब समय हुआ तो मैं ही वह प्रथम व्यक्ति था जिसने बेलूड़ मठ से आए वरिष्ठ संन्यासी का दर्शन पाने की उत्कण्ठा में उनके कक्ष में प्रवेश किया। हे भगवान ! ये क्या, ये तो वे ही थे जिनसे प्रवेश द्वार पर मैंने बड़ी ही झुंझलाहट में बात की थी। वे अपने बिस्तर पर आँखें बन्द करके बैठे थे। बस मुझे और क्या चाहिए था। कक्ष में प्रवेश किया और बिना कोई शब्द किये कोने में इस प्रकार से जा बैठा कि वे मुझे न देख सके। हम सभी पांच लोग

(स्वामी गोकुलानन्दजी, शान्तरूपानन्दजी और तीन ब्रह्मचारीगण) उनके सामने बैठे थे। मैं पीछे की तरफ अपनी आँखें चुराकर बैठा था। जैसे ही पूज्य महाराजजी ने अपनी आँखे खोली, उन्होंने मेरी ओर देखा और बोले, 'उधर क्यों बैठे हो ?' बड़ी ही झिझक के साथ मैं उनके सामने आकर बैठा और तैयार था कि वे अब मेरे उनके स्वागत में हुए अप्रस्तुत व्यवहार की भर्त्सना स्वामी गोकुलानन्दजी से करेंगे। बड़े आश्चर्य की बात थी, मैं प्रतीक्षा करता रहा और वहाँ साधनमय जीवन पर लगभग एक घण्टे तक विचारों का आदान-प्रदान एवं दिशा-निर्देशन चलता रहा और तत्पश्चात सभी अपने अपने कक्षों में चले गये, मैं भी निश्चिन्त हो गया कि उन्होंने तो मुझे पहचाना ही नहीं, और प्रसन्नता से सो गया।

दूसरे दिन प्रातः स्वल्पाहार के पश्चात उनके प्रस्थान के समय पर परम्परा के अनुसार उनके गाड़ी में बैठने पर हम सभी एकत्र हो समवेत स्वर में पावन त्रिदेवों और स्थानीय देव-देवियों की जयकार ध्वनि दे देने के बाद गाड़ी चलने से पहले मेरी ओर देख कर उनकी दिव्य मुस्कुराहट से बोले - 'तुम्हारा बाजार करना समाप्त हो गया है तो' और उनकी उस समय की छवि, उनके नेत्रों में मेरे प्रति स्नेह की झलक आज भी मेरे नेत्रों से हृदय में सजल श्रद्धा का सींचन करती आ रही है। मैं उनके स्नेह से कृत-कृत्य हुआ आज भी उनके द्वारा विभिन्न समयों पर दिये गये दिशा-निर्देशों में मेरे प्रति उनका स्नेह अनुभव करता हूँ ।

रामकृष्ण संघ के संघाध्यक्ष के रूप में जब उनका चैरापूंजी आगमन हुआ उस समय मैं अरूणाचल प्रदेश के तिराप में नरोत्तमनगर में सेवारत था। उस समय एक अप्रत्याशित फोन कॉल पर मुझे सूचित किया गया कि वे मुझसे मिलना चाहते हैं। मैं गाड़ी से बारह घण्टों की यात्रा कर अरूणाचल प्रदेश से सुदूर मेघालय राज्य में स्थित चेरापूँजी रामकृष्ण आश्रम पहुंचा, तो मुझे पता चला कि वे उस समय रात्रि-विश्राम के लिए चले गये हैं। उनको

मेरे आने का समाचार प्राप्त होने पर बड़े ही स्नेह से अपने कक्ष में बुलवाया। उस समय वे बिस्तर पर लेटे थे और मैं उनके पलंग के पास नीचे फर्श पर प्रणाम कर वहीं बैठ गया। उन्होंने मेरे कन्धे पर हाथ रख कर बड़े ही मधुर स्वर में कहा, 'भारत के इस पूर्वी अंचल में बहुतों ने मन्त्र-दीक्षा ली है परन्तु वे रामकृष्ण भावधारा से परिचित नहीं है, मेरी इच्छा है कि तुम उन स्थानों में सब से मिलो और उन्हें भगवान श्रीरामकृष्ण, जगत जननी माँ सारदा एवं स्वामी विवेकानन्द की भावधारा से अवगत करवाओ।'

यहाँ सन् २०१२ में शिकागो आने से पूर्व तक संघगरु के आदेशों को शिरोधार्य करते हुए भारत के पूर्वी अंचल में श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा के प्रचार प्रसार हेतु भरसक प्रयत्न हुए और आज भी मेरे लिए वे पाश्चात्य जगत में प्रेरणा मूर्ति बने हुए हैं। उनके साथ और भी बहुत से रोचक एवं प्रेरणादायी प्रसंग हैं जिन्होंने मेरे जीवन को नई दिशा प्रदान की, यहाँ समयाभाव के कारण सिर्फ प्रथम और अन्तिम भेंट का ही उल्लेख करने का सौभाग्य हुआ।

मेरा, भाई तत्परानन्द को हार्दिक स्नेह जिसने इस कार्य का बीड़ा उठाया है, महापुरूषों की स्मृति में किया गया प्रत्येक कार्य उनकी कृपावारि के स्निग्ध स्पर्श से जीवन को सफल बनाए, यही मेरी इस कार्य में लगे प्रत्येक व्यक्ति के लिए प्रार्थना है।

स्मृतिकथा

परम पूज्य स्वामी आत्मनिष्ठानन्दजी महाराज
सचिव, विवेकानन्द स्मृति मन्दिर, खेतड़ी

स्वामी भूतेशानन्दजी तब मठ और मिशन के सहाध्यक्ष एवं योगाद्यान मठ के अध्यक्ष थे, उस समय मैं योगोद्याान मठ में ही था। स्वामी गहनानन्दजी महाराज के दर्शन करने का सौभाग्य, उस समय योगोद्यान मठ से बेलूड़मठ बीच बीच में आना जाना होता, तब मिल जाता था। वे भी बहुत बार स्वामी भूतेशानन्दजी महाराज से मिलने योगोद्यान मठ में आते रहते थे। वे आ रहे हैं, यह खबर योगोद्यान पहुँचने से ही वहाँ की साज-सज्जा और चहल पहल बढ़ जाती थी।

एक बार मेरे साथ एक दुर्घटना घटी। विद्युत प्रवाह से सम्पर्कित हो जाने के कारण मेरे दाहिने हाथ की दो अंगुलियाँ प्रभावित हो गई। उस दिन या उसके दो दिन बाद स्वामी गहनानन्दजी महाराज भूतेशानन्दजी से मिलने आए। गहनानन्दजी को प्रणाम करने के समय उन्होंने मेरे हाथ में बंधी पट्टी को देख कर मुझसे पूछा, 'क्या हुआ ?' मैंने सब बताया तो उन्होंने प्रश्न किया कि जब दुर्घटना घटी तब श्री श्री रामकृष्णदेव का स्मरण हुआ था या नहीं। मैंने बोला, "सच बोलूँ, उस समय ठाकुर का कुछ भी स्मरण नहीं हुआ।" यह सुनकर वे स्मित भाव से मुस्कुराने लगे। भूतेशानन्दजी पास ही बैठे थे। उनके बोलने की जैसी संयमित और सरस शैली थी उसी भंगिमा में बोले, "वो सत्य ही तो बोलेगा, मिथ्या क्यूं बोलेगा ?" इस घटना के बाद मेरे मन में चिन्ता हो गयी कि ठाकुरजी की चिन्तन का अभ्यास करना मेरे लिये प्रयोजनीय है जिससे ऐसा कोई संकट आने पर उनका स्मरण कर सकूँ। उसके पश्चात जब बेलूड़ मठ के प्रशिक्षण केन्द्र जाना हुआ जब स्वामी गहनानन्दजी संघ के महासचिव पद

पर आसीन थे। उस समय वे ब्रह्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र के ब्रह्मचारियों को विभिन्न समयों पर बुलाते और संघ जीवन के सम्बन्ध में उनके प्रश्नोत्तर और उस सम्पर्क में बहुत से उपदेश भी देते। उनके साथ इस प्रकार का साक्षात्कार और हम सभी ब्रह्मचारियों के प्रति उनका सहानुभूतिपूर्ण उपदेश सुनकर साधुजीवन हेतु बहुत ही उत्साह एवं मार्ग-दर्शन मिलता था। उनके ब्रह्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र में हुए भाषण बहुत ही प्रेरणादायी हुआ करते थे।

प्रशिक्षण की अवधि पूर्ण होने पर उन्होंने मुझे कर्मी के रूप में पुरी मिशन भेजा। वहाँ अभी एक वर्ष ही हुआ होगा कि सुना स्वामी गहनानन्दजी सहाध्यक्ष हुए हैं और योगाद्यान रामकृष्ण मिशन में रहेंगे। इन्हीं दिनों सहसा ही पुरी मिशन के अध्यक्ष महाराज ने बुला कर कहा कि मुझे शीघ्रातिशीघ्र योगोद्यान मठ जाना होगा जहाँ मुझे गहनानन्दजी महाराज के सेवक के रूप में सेवाएँ देनी हैं। मैं ८ मई, १९९२ को योगोद्यान पहुँचा। उनको प्रणाम करने पर वे बोले, ''सब काम-काज अच्छे से समझ लो।'' दो-एक दिन बाद ही सहाध्यक्ष के रूप में गुरूत्त्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ करने से पहले एकान्तवास, तपस्या और तीर्थाटन करने हेतु वे प्रायः एक महिने के लिए वृन्दावन, हरिद्वार होकर मायावती और श्यामलाताल के लिए रवाना हुए। मैं इस दौरान योगोद्यान मठ में ही रहा।

जहाँ तक मुझे स्मरण है, तपस्या एवं तीर्थाटन से वे जून महिने के प्रथम सप्ताह में योगोद्यान लौट आए थे। उस वर्ष १५ जून को स्नान यात्रा का पर्व था। और यह पर्व उनके मन्त्र गुरुदेव और रामकृष्ण संघ के छठवें संघाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी विरजानन्दजी महाराज का जन्मदिन भी था, उन्होंने २५ भक्तों को मन्त्र-दीक्षा प्रदान कर अपने गुरुदायित्व का शुभारम्भ किया। उस समय उनका शरीर-स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा था। स्वभाव से ही वे कर्मठ और कठोर थे। सुबह की भोर-बेला में उठ कर अपने कक्ष में धूप जलाकर लम्बे समय तक अपनी जप माला पर जप किया करते

थे। फिर व्यायाम करके स्नानादि से निवृत होकर ही अपने कमरे का दरवाजा खोला करते थे। अपने कपड़ो को नहाने के समय ही धो लेते थे, मैं उन कपड़ों को बाहर सूखने के लिए डाल दिया करता था। किस प्रकार कपड़ों को सूखाने के लिए डाला जाए ताकि वे शीघ्र सूख जाएँ और उनमें सलवट भी कम से कम पड़ें, उन्होंने यह सब अच्छे से सिखला दिया था। उसी प्रकार ही मैं उनके कपड़ों को सूखाया करता था। फिर भी कपड़ों में ऐसी कुछ सलवट देखने पर स्वयं ही उसे ठीक कर लिया करते थे। शुरू-शुरू में हमारे पास कपड़ा इस्त्री करने का यन्त्र ही नहीं था इसीलिए उन्होंने दिखला दिया था कि बिना इस्त्री किए ही हाथों से कैसे खींच-खींच कर सूखे हुए कपड़ों की सलवट को दूर करके, तह कर रखने से कपड़े इस्त्री से तह किये गये के समान हो जाते हैं। अपने कपड़े जैसे कि धोती, कुर्ता, उत्तरीय और टोपी आदि का गेरूआ रंग एक समान नहीं मिलने पर उसे पहनना पसंद नहीं करते थे। कुछ दिन बाद ही उनकी व्यस्तता बढ़ गयी थी, इस हेतु बहुत अनुनय-विनय करके उनसे कपड़े धोने का काम मैंने ले लिया था। अपने पहने हुए कपड़ों को मेरे धोने के लिए वे ऐसे रख दिया करते थे कि जैसे वे धुले हुए कपड़े हैं। जूता पहनने से पहले उन पर धूल रहने पर पुराने मोजों से वे उसे स्वयं ही झाड़ लिया करते थे। स्नान करने के समय वे एक लकड़ी की अंगूठे वाली खड़ाऊ पहना करते थे। स्नान करने के पश्चात उसे पोंछ कर यथास्थान रख देते थे। दैनन्दिन व्यवहार में काम आने वाली प्रत्येक वस्तु सुचारू रूप से यथा-स्थान पर ही रखना पसंद करते थे। स्वयं सर्वदा स्वच्छ, शुद्ध और पवित्र रहना पसन्द करते थे।

वे स्वयं की कोई भी असुविधा दूसरे को समझने ही नहीं देते थे। जो सेवा-कार्य मुझसे भूलवश हुआ नहीं हो, देख कर स्वयं ही कर डालते थे इसिलिए मुझे सर्वदा ही चिन्ता रहती कि कहीं कोई भूल न हो जाए और कहीं कोई सेवा छूट न जाए क्योंकि यदि वे न बताएँ या मुझे न बुलाएँ तो वे स्वयं ही कर डालेंगे, इससे

उनका बहुमूल्य समय भी नष्ट होगा और उनको अनावश्यक कष्ट भी होगा। कभी कुछ करने के लिए बोलते तो सिर्फ संकेत कर देते थे या कभी बोलते भी तो बहुत ही संक्षेप में सूत्र रूप से। बोलना न होगा कि उनके इस प्रकार के आदेशों को समझने और अभ्यस्त होने में मुझे काफी समय लगा था।

वे बोलते, ‘‘यदि बोल कर ही काम करवाना पड़े तो सेवक की क्या आवश्यकता ? महिना लेकर काम करने वाले को रख लेना ही तो अच्छा होगा, हर बार जो बोलेंगे वही वह करेगा।’’ बीच-बीच में बोलते, छोड दो, काम बढ़ाओ नहीं।’’ मैं बोल पड़ता, ‘क्यों महाराजजी ?’’ तब वे अपने जीवन की एक घटना बोलते। महाराज जब भुवनेश्वर मठ में साधु होने की इच्छा से आए थे, तब स्वामी शंकरानन्दजी महाराज (स्वामी ब्रह्मानन्दजी महाराज के मन्त्र-शिष्य एवं रामकृष्ण मठ एवं मिशन के प्रथम संघाध्यक्ष) भुवनेश्वर मठ में ही रहते थे। वरिष्ठ साधु हैं इसीलिए स्वभावतः उनकी सेवा का कुछ कार्य करने की इच्छा हुई। सुबह सुबह जब शंकरानन्दजी महाराज ने अपने कमरे का दरवाजा खोला तो वे महाराजजी के कमरे में गये। देखा कि उनके बिछोने पर जो चद्दर है वह तह करके नहीं रखी हुई। इसलिए उन्होंने चद्दर को तह करना शुरू किया। शंकरानन्द महाराजजी कुर्सी पर ही बैठे थे। महाराजजी ने देखा कि ब्रह्मचारी नरेश चद्दर तह करके रखने की कोशिश कर रहे हैं, तो वे अपने स्वाभाविक गुरु गम्भीर गले से कुछ यूँ बोले, ‘‘छोड दो, काम बढ़ाओ नहीं।’’

शंकरानन्दजी महाराज का ऐसा ही गुरु गम्भीर व्यक्तित्त्व था कि उनके ये शब्द सुनने मात्र से ही चद्दर उनके हाथ से छूट कर बिस्तर पर गिर पड़ी। अब स्थिति दूसरी थी, काटो तो खून नहीं वाली स्थिति हो गई, वहाँ रुकने के लिए अब तो कोई कारण ही नहीं बचा था और कुछ पूछने का तो साहस भी नहीं, कैसे करूँ यह जानने के लिए प्रश्न पूछने का भी कोई स्थान ही न बचा। ब्रह्मचारी कमरे से बाहर आ गया। किन्तु ब्रह्मचारी भी कम न था,

उसने सोचा कि देखना चाहिए कि महाराजजी स्वयं किस प्रकार चद्दर को तह करते हैं। फिर चुप-चाप शंकरानन्दजी महाराज के कमरे में छुप कर देख आए वे किस प्रकार चद्दर को तह करके रखना पसंद करते हैं। उन्होंने देखा कि अस्पताल में रोगी लोगों के बिछोने पर उनकी सुविधा के अनुसार जैसे चद्दर तह करके रखी जाती है, ठीक उसी प्रकार चद्दर को तह किया गया है अर्थात चद्दर के एक तरफ का अंश पकड़ कर खींचने से ही वह पूरी खुल जाती है और सोये हुए व्यक्ति के पूरे तन को ढ़कने में कोई असुविधा नहीं होती। शंकरानन्दजी ने उन्हें बोला था, ''काम बढाने की आवश्यकता नहीं है,'' अर्थात वे स्वयं जब इस काम को करते हैं तो वह हुआ काम करना, किन्तु कोई यदि अपनी अन्य कोई विधि से इसे तह करके रखेगा तो फिर से उसे खोलकर उन्हें ही तह करना पड़ेगा तो बोलो काम बढ़ाना हुआ या सेवा हुई। जो भी हो, अगले दिन फिर से ठीक उसी समय ब्रह्मचारी नरेश उनके कमरे में गये और बिना गलती किए जैसा पहले देख कर गये थे वैसा ही उन्होंने कर दिया और इस बार शंकरानन्दजी ने कुछ नहीं कहा, यहीं से उन दोनों में घनिष्ठता हो गई और फिर क्या था, खूब जम के विभिन्न समयों पर उनकी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हो गया।

रामकृष्ण संघ में अपना योगदान देने के प्रारम्भिक जीवन में ही शंकरानन्दजी, निर्वाणानन्दजी, अचलानन्दजी के संस्पर्श में आने से संघजीवन के आदर्श उनके अन्तःकरण में आजीवन अपनी अमिट छाप बना गये। गहनानन्दजी महाराज जो भी कार्य करते पूरे मनोयोग से ही करते। कितनी ही व्यस्तता क्यूँ न हो, कोई भी कार्य वे न तो जल्दबाजी में करते और न ही अन्यमनस्क होकर करते। जूता भी खोलते तो उसे सीधी रेखा में और दोनों पाँव के जूते एकदम पास-पास और यथा-स्थान ही रखते। कितनी भी व्यस्तता क्यों न रही हो इन सबमें कोई व्यतिक्रम नहीं देखा जाता। कुर्ता भी खोलते तो उसके लिए एक निर्दिष्ट हैंगर था। और वो

भी उनके बिस्तर के उपर मसहरी बाँधने की खूँटी पर ठीक पँखे के नीचे रखते ताकि इतनी हवा मिले कि उसमें जितना भी पसीना लगा हो वह जल्दी सूख जाए। कोई भी आश्रम में जाने पर मन्दिर में लगे ठाकुर, माँ, स्वामीजी एवं उनके पार्षद शिष्यों के छविचित्र यदि टेढ़े लगे हों तो उसे सीधा करने को बोलते। पार्षद स्वामीजी लोगों की छवि को, उनके संघाध्यक्ष बनने के क्रम से लगाने को बोलते। शरीर त्याग से कुछ महीने पूर्व वे एक आश्रम में गये थे। आगत भक्त लोगों को दर्शन देने एवं प्रणाम आदि अभ्यर्थना स्वीकार करने के लिए वे अपने कमरे से निकले और बरामदे में आकर खड़े हो गये, और आगे बढ़ नहीं रहे थे। उन्होंने देखा कि उनके सामने जो पायदान पड़ा है वह सीधा करके नहीं रखा हुआ और वे उसे अपने पाँव से सीधा करने का असफल प्रयास करने लगे। किन्तु शरीर इतना दुर्बल था कि वे अपने पाँव से उसे सीधा नहीं कर पा रहे थे और आगे भी नहीं बढ़ पा रहे थे। मुझे सब मामला समझ आते देर न लगी और उस पायदान को सीधी रेखा में करके रख दिया और उन्होंने प्रसन्न होकर चलना प्रारम्भ कर दिया। प्रत्येक कार्य के प्रति ऐसी ही थी उनकी विलक्षण तीक्ष्ण दृष्टि।

वे स्वयं जैसे श्रृंखलाबद्ध तरीके से कार्य करना पसन्द करते थे, दूसरों में भी उसी प्रकार की अनुशासन बद्ध श्रृंखला का विकास देखना चाहते थे। कुर्ते के बटन खुले या टूटे रहना, माथे की टोपी सीधी करके नहीं पहनी हो, विषय से हटकर बातचीत करना आदि को वे मानसिक विश्रृंखला का बहिःप्रकाश ही मानते थे। ऐसा कुछ देखने मात्र से ही वे इन्हें यथासम्भव सुधरवा देते थे।

एकबार एक युवक महाराजजी को प्रणाम करने के लिए आया। उसने अपने बदन पर एक बनियान पहनी हुई थी जिस पर बड़े-बड़े अक्षरों में 'यू०एस०ए०' लिखा था। महाराजजी को ऐसा पसन्द नहीं आया और वे उस युवक की भर्त्सना करते हुए बोले,

"भारतवर्ष कितने मनुष्यों के सर्वस्व त्याग स्वीकार करने के फलस्वरूप स्वाधीन हुआ है, उस स्वाधीन भारत की तुम सन्तान होकर दूसरे देश का बिल्ला लगाकर घूम रहे हो। तुमको लज्जा आनी चाहिए ?" एक बार किसी कार्यवश किसी भक्त को फोन किया। कुछ देर वार्तालाप होने से महाराजजी को समझ में आया कि वह पान चबाते-चबाते टेलिफोन पर बात कर रहा है। भक्त को आश्चर्यचकित करते हुए बोले, "पहले तुम पान थूक कर आओ, फिर तुम्हारे साथ बातचीत होगी।" टेलिफोन पर पूज्य महाराज से बात करने की इच्छा प्रकट करने से कितनी भी व्यस्तता क्यों न हो, वहाँ पर उपस्थित रहने पर वे अवश्य ही बात करते। उनकी अनुपस्थिति में दिशा-निर्देश दिए हुए थे कि जिन्होंने फोन किया है उनका नाम, फोन नम्बर, वक्तव्य इत्यादि जानकारी टेलिफोन करने वाले से पूछ कर रख लेनी पड़ती थी और तो और उनकी अनुपस्थिति में फोन करने वाले चाहे कितने ही अपरिचित क्यों न हो, समय निकाल कर उसे फोन कर बात करने में संकोच नहीं करते थे। कई बार फोन पर सब जानकारी ठीक-ठीक नहीं ले पाने पर उनकी भर्त्सना के लिए तैयार रहना पड़ता था। कई बार किसी और महाराज के लिए फोन बजने पर जब वे उठा लेते तो अपना परिचय न देकर उन्हें फोन पर बात करने हेतु उनके कमरे से बुला लाते और बात करने को बोलते। इस प्रकार करने में वे कोई कष्ट अनुभव नहीं करते थे। फोन नहीं उठाने पर डाँट पड़ती थी। वे बोलते, "जो फोन कर रहे हैं हो सकता है वे हमारे ही किसी प्रयोजन के लिए कर रहे हो।" महाराज की जीवनचर्या अत्यत्त सुश्रृंखलाबद्ध होने पर भी वे प्रायः ही अपने निर्धारित समय पर कोई भी कार्य न तो शुरू कर पाते न ही उसे समय पर समाप्त। यह उनके स्वभाव का अद्‌भुत वैशिष्टय था। इन सबके पीछे कारण यही था कि वे प्रत्येक कार्य को देव-पूजा का ही पर्याय समझ कर करते थे। पूजा के षोडश उपचारों की ही भांति बहुत ही तन्मयता के साथ कार्य को

सर्वांग-सम्पूर्ण करना उनके स्वभाव का अंग था। कार्य को संक्षेप में या काम चलाने की भाँति नहीं करते थे। इसी कारण से जो कार्य उनके हाथ में होता उसके पूर्ण होने में समय लगता और दूसरे कार्य के प्रारम्भ होने में भी देरी हो जाती। किसी कार्य में देरी होने पर दूसरे लोग विचलित होने लगते पर उनको इस प्रकार का विक्षेप स्पर्श नहीं कर पाता था। वे अपने इसी स्वभावगत अद्‍भुत विशिष्टता पर अडिग रहते।

पूज्य महाराजजी एक असीमित मानसिक शक्ति के अधिकारी थे। उनके आत्म विश्वास की अथाह गहराई को माप पाना बड़ा ही मुश्किल काम था। वे सर्वदा अपनी अन्तः प्रेरणा से ही कार्य करते। वे जिस किसी कार्य को शुरू करते उसे पूर्णत्त्व तक ले जाने के लिए प्राणपण चेष्टा करते, हताश करने वाली विघ्न-बाधाएँ स्वयं ही हताश हो जाती थी। वे इन बाधाओं का भी आनन्द लेना जानते थे। हम लोग निराश होकर बोल पड़ते कि,"यह तो होना असम्भव ही है।" और उनकी वही सुन्दर मुस्कान चेहरे पर अपनी छटा बिखेरते हुए बोलते, "तुम लोग इतनी जल्दी हार मान गये ?" इस प्रकार के मानसिक सम्बल के वे धनी थे कि उनके कार्य में यदि कोई साथ नहीं भी दे रहा हो और उनको उसे एकाकी करना पड़े तो भी वे अपने मन्तव्य के प्रति अडिग रहते। इसी सन्दर्भ में एक घटना है, एक बार आसाम में दीक्षा देने के लिए जाना हुआ, यातायात के लिए गाड़ी से पूरा रास्ता तय करना था और दोपहर के भोजन के लिए एक भक्त के घर व्यवस्था हुई। वहाँ उन्हें जानकारी मिली कि वहाँ एक समय प्राइवेट आश्रम हुआ करता था, किन्तु पदाधिकारियों और कार्यकर्ताओं में मतैक्य होने के कारण उसे बन्द कर दिया गया था। उन लोगों के विवादों की कटुता को देख कर और आश्रम के भविष्य को ले कर महाराज बहुत चिन्तित थे। महाराजजी ने बहुत ही चेष्टा की, परन्तु वे किसी भी प्रकार से उन लोगों में मेल नहीं करवा पा रहे थे। इसके पश्चात योगाद्यान लौट कर कई दिनों तक उन लोगों से

टेलिफोन पर अलग-अलग वार्तालाप करने का सिलसिला शुरू हुआ। एक पदाधिकारी के रिश्तेदार कोलकाता रहते थे, उनको बुलवाया गया। अन्त में उनके इस प्रकार के अक्लान्त परिश्रम और प्रचेष्टाओं के कारण वह आश्रम स्थानीय भक्तों के लिए फिर से खुल गया। महाराजजी ने फिर कई बार उस आश्रम में रहकर दीक्षादि कार्य सम्पन्न कर भक्तों को आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर किया।

महाराजजी की सभी कार्यों में एक निजस्व की परिकल्पना रहती थी और उसे वे कभी भी विस्तारपूर्वक बोलने में विश्वास नहीं करते थे। कोई भी जब परामर्श देता तो उसे बड़े ही धैर्य के साथ सुनते। किन्तु कार्य की परिणति के समय यही देखने को मिलता कि वे अपनी कार्य-पद्धति के अनुसार ही चल रहे हैं और सम्पूर्णता पर सभी अनुभव करते कि उनकी पद्धति ही सर्वांग सुन्दर और सहज स्वीकार्य है। कठिन तपस्या के प्रभाव से एवं परिशुद्ध अन्तःकरण की सहायता से ही सम्भवतः वे त्रुटिरहित एवं सामन्जस्यपूर्ण सिद्धान्त पर चल पाते थे। योगोद्यान मठ का मूलभूत संरचनागत सुधार-कार्य उनकी दूरदृष्टिपूर्ण कल्पनाशक्ति के कारण ही धीरे-धीरे सुव्यवस्थित तरीके से सम्पन्न हुआ। मठ में कर्मचारियों के रहने के लिए भवन, अतिथि निवास, सभागार, गर्भ मन्दिर की वेदी का संस्कार कर श्रीश्री ठाकुर की संगमरमर की मूर्ति के दोनों ओर श्रीश्री माँ सारदा एवं श्रीश्री स्वामीजी के आसनों की स्थापना आदि महत्वपूर्ण कार्य महाराजजी ने अपने सफल निर्देशन में सम्पूर्ण करवाए। इन सब कार्यों में प्रथमतः महाराजजी के साथ अनेकों के मतभेद थे परन्तु इन सब कार्यों की उपयोगिता देखकर बाद में सभी ने उनका साथ दिया। अन्य जिन शाखा-केन्द्रों में उन्होंने इस प्रकार के जो दिशा-निर्देश दिए थे, वे सभी आज कार्य रूप में परिणत हुए हैं और उन सबसे शाखा-केन्द्रों को लाभ भी मिला है।

महाराजजी को अनेक प्रकार के लोगों के साथ नियमित सम्पर्क में रहना पड़ता था। सभी उनको समझ पाए ऐसा सर्वदा नहीं होता था, कभी-कभी उनको दूसरों के उग्र-व्यवहार का भी सामना करना पड़ता था, मुझे तो पूज्य महाराज को बहुत ही निकट से देखने का सौभाग्य मिला है, उनको इस प्रकार के अप्रीतिकर व्यवहार को ले कर कभी भी दुश्चिन्ता या अवसाद में पड़ते नहीं देखा था। उन लोगों के प्रति उनका कोई वैरभाव का पोषण करते भी नहीं देखा। उन लोगों के आने पर उनके साथ स्वाभाविक व्यवहार ही उनकी सौम्यता का रहस्य था। किनसे मिलेंगे और किनसे नहीं, ऐसा कोई विचार कर आगन्तुकों से नहीं मिलते थे। जिनको दुष्ट और दुर्दमनीय कहा जाता था उन लोगों में वे ईश्वरीय प्राणशक्ति की प्राचुर्यता देख पाते थे। इसलिए उन्हें महाराजजी का बहुत ही स्नेह प्राप्त होता था। उन लोगों को पास बुला कर बातचीत के दौरान ही विभिन्न छद्‌मोपदेश देते जिससे वे अपनी क्रिया-शक्ति को अच्छे मार्ग पर लगा पाते। उनके उत्साहवर्द्धन से बहुत से लोग रामकृष्ण-भावधारा से युक्त हो धन्य हुए और तो और इस प्रकार किसी किसी साधु-ब्रह्मचारी को असुविधा होने पर उनके संघ में रहने के लिए अनुपयुक्त कहे जाने पर भी वे उन्हें अपनी स्नेहछाया में आश्रय प्रदान करते। इस प्रकार कभी-कभी उनके दोषों की चर्चा होने पर वे बोलते, ‘‘उसे अन्य कोई स्थान पर भेज देने पर हो सकता है कि वह संघ में रह ही नहीं पाएगा। यहाँ सभी को थोड़ी असुविधा होने पर भी सभी को उसे किंचित कष्ट मान कर चलना सीख लेना चाहिए। उससे उभय पक्षों का उपकार ही होगा।’’ उनके धैर्य की क्षमता के परे की सामर्थ्य-शक्ति के सामने कितने भी उद्दण्ड व्यवहार का व्यक्ति क्यों न होता उसे नत-मस्तष्क होना ही पड़ता और महाराजजी के सान्निध्य में अपने चाल-चलन में आमूल-चूल परिवर्तन के सौभाग्योदय का साक्षी होता।

महाराजजी से आयु में वरिष्ठ संन्यासी भी मठ में रहते थे। उनके प्रति भी उनकी श्रद्धा एवं सद्व्यवहार बड़ा ही अतुलनीय था। स्वामी भूतेशानन्दजी महाराज जब मठ के अध्यक्ष थे तब नियमित उनका कुशल-क्षेम पूछने में वे चूक नहीं करते थे। उस समय जब हम लोग महाराज की सेवा करते थे, तब संचार के माध्यम इतने अच्छे और आसान नहीं हुआ करते थे। उस समय सहाध्यक्ष के रूप में दीक्षादि कार्यों हेतु उन्हें अधिकतर कोलकाता के बाहर ही प्रवास पर रहना पड़ता था। किन्तु वे जहाँ कहीं भी रहते अध्यक्ष महाराज की नियमित जानकारी लेते और टेलिफोन कर प्रणाम निवेदित करते एवं संवाद-समाचारादि का आदान-प्रदान करते।

एक बार की बात है, वे अति ग्रामीण-अंचल के केन्द्र में प्रवास पर थे। महाराज सदैव की भांति ही अध्यक्ष महाराज के स्वास्थ्य की जानकारी लेंगे ही लेकिन वहाँ फोन की लचर व्यवस्था थी। अब क्या किया जाए? वहाँ के अध्यक्ष महाराज ने १० किलोमीटर दूर एक भक्त के यहाँ पता लगाया कि फोन की व्यवस्था सुचारू चल रही है, बस, वहीं पूज्य महाराजजी को गाड़ी से ले जाने की व्यवस्था की गई। सन्ध्या समय सब भक्तों के प्रणाम निवेदन के पश्चात जब उन्हें समय मिला तब तक रात्रिदेवी ने अन्धकार का आँचल बिछा दिया था। उस घुप अंधेरे में, उबड़-खाबड़ रास्तों से महाराजजी की गाड़ी चली और गन्तव्य तक पहुँच कर सब समाचारादि लेकर करीब दो घण्टों के पश्चात लौटे और उनके मुख-मण्डल पर जरा भी क्लान्ति और कष्ट का चिन्ह न था, विराजित था सौम्य-कान्ति रूप दिव्यता एवं सन्तोष। ऐसा उस प्रवास काल में तीन दिनों तक चला।

योगोद्यान में उत्सवादि के दिन मन्दिर में प्रणाम करने के पश्चात अपने कक्ष से बेलूड़ मठ अध्यक्ष महाराजजी को प्रणाम निवेदित करते फिर भक्तों का पंक्तिबद्ध प्रणाम ग्रहण करते। कोलकाता से बाहर जाने पर वे पहले बेलूड़ मठ आते और

मन्दिरादि प्रणाम करने के पश्चात अध्यक्ष महाराजजी को प्रणाम करते, उन्हें अपने बाहर जाने का समाचार देते और आशीर्वाद ग्रहण कर ही अपनी यात्रा आरम्भ करते। वापसी पर भी यही प्रकिया दोहराने का उनका अभ्यास संघबद्ध जीवन की प्रगाढ़ता ही प्रदर्शित करता है। उस समय उनकी व्यस्तता भी बहुत रहती थी किन्तु अध्यक्ष महाराज, वृद्ध एवं ज्येष्ठ संन्यासियों के प्रति उनकी श्रद्धा इतनी गहरी थी कि वे अपने स्वास्थ्य और विश्रामादि को ताक पर रख कर निश्चित ही समय निकाल लेते और इस विषय में कोई चूक नहीं करते थे।

स्वामी रंगनाथानन्दजी का जब प्रथम बार बेलूड़ मठ में अध्यक्ष के रूप में पदार्पण हुआ उस दिन उनका वराहनगर मठ में मन्त्र-दीक्षा का आयोजन पूर्व-निर्धारित था। वे मठ में आए, नए अध्यक्ष महाराज का आदर-सत्कार और प्रणामादि निवेदन कर नौका पर सवार हो गंगा नदी पार कर वराहनगर पहुँचे और मन्त्र-दीक्षा अनुष्ठान में उपस्थित हुए।

मठ के अध्यक्ष महाराज के अलावा अन्य जो भी वरिष्ठ महाराजगण मठ में थे उनके प्रति उनकी स्वभावगत श्रद्धा तो थी किन्तु जब वे स्वयं अध्यक्ष पद पर आसीन हुए तब भी उनकी श्रद्धा कम नहीं हुई अपितु उन वयोवृद्ध संन्यासियों के आने पर वे उठ कर उनकी अभ्यर्थना करते और कुर्सी देकर पास बैठा लेते और सम्भाषण व अल्पाहार से उनका समुचित सम्मान करते। उनका कुशलक्षेम पूछते और कुछ भी चाहने पर उसकी पूर्ति करवाते।

शिशु-मंगल के प्रथम सचिव स्वामी दयानन्दजी महाराज ने स्वामी गहनानन्दजी के कंधों पर प्रतिष्ठान का कार्य भार सौंपा और वे स्वयं वहीं साधु-निवास में ही रहने लगे थे। ऐसा ही सुनने में आता है कि उस समय भी शिशु-मंगल के नियमित कार्यों में उनसे परामर्श लेने हेतु महाराज उनके कमरे में जाते और सब समाचारादि भी सुनाते।

स्वामी गहनानन्दजी महाराज अतीव प्राचीन स्वामीजी लोगों के भी स्नेहभाजन थे। स्वामी विरजानन्द महाराज के जीवन के अन्तिम पर्व में कोलकाता अद्वैत आश्रम से महाराज प्रायः प्रतिदिन ही चिकित्सक को साथ लेकर मठ आया करते। कभी कभी वे प्रयोजनीय दवाईयाँ आदि कोलकाता से संग्रह कर महाराज जी को मठ में दे आते थे। उस समय चिकित्सा की इतनी अच्छी व्यवस्था नहीं मिल पाती थी किन्तु वे अपने श्रीगुरु की सेवा हेतु भरसक प्रयत्न करते। इसी सेवा के माध्यम से अपने श्रीगुरुदेव के स्नेह और आशीर्वाद के धनी हुए। स्वामीशंकरानन्दजी, विशुद्धानन्दजी और माधवानन्दजी महाराज के वे विशेष प्रीतिभाजन थे। निर्वाणानन्दजी महाराज के विशेष आस्थाभाजन थे। उन सभी के साथ उनका गहन अन्तरंग सम्बन्ध था। अपने वार्धक्य में जीवन के अधिकांश कार्यों में वे अपने स्नेहभाजन 'नरेश' पर ही निर्भर रहा करते थे। घड़ी बिगड़ जाने पर बोलते, "तुम लोग रहने दो, नरेश आने पर एकदम ठीक करवा देगा।" स्वामी वीरेश्वरानन्दजी भी संघ के बहुत से गुरुत्वपूर्ण कार्यों का भार महाराज के ऊपर छोड़ कर निश्चिन्त रहते। महाराज के श्रीमुख से बहुत बार इस घटना को मैंने और अन्यों ने भी सुना, स्वामी वीरेश्वरानन्दजी सर्वदा उनके कुर्ते की जेब में पवित्र स्मृति अवशेष या रेलिक्स का एक डिब्बा धारण करके रखते थे। उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम पड़ाव पर एक दिन गहनानन्दजी को एकान्त में बुलवाया और बोले, "जब देखोगे कि मैं शुचि-अशुचि के नियम की रक्षा नहीं कर पा रहा हूँ तब मेरी जेब से तुम निकाल लेना और तुम्हारे पास रखना।" जीवन के अन्तिम समय तक स्वामी वीरेश्वरानन्दजी सचेतन थे। देहत्याग के मात्र कुछ ही समय पूर्व अपने कमरे में उपस्थित संन्यासियों के बीच गहनानन्दजी को पास बुलाकर अपने हाथ से उन पवित्र स्मृति अवशेषों को उनके हाथों में सौपा। कुछ समय पश्चात फिर से उन्हें अपने पास बुला कर पूछा कि उन्होंने उसे ठीक-ठीक रखा है कि नहीं, सकारात्मक उत्तर मिलने पर वे

निश्चिन्त हुए और कुछ क्षण पश्चात ही उन्होंने इस मर्त्य-देह का त्याग किया।

पूज्य गहनानन्दजी महाराज प्रत्येक मन्त्र-दीक्षा कार्यक्रम में उन पवित्र स्मृति अवशेषों को अपने हाथ में रखते और अन्त में प्रणामादि निवेदन के समय दीक्षार्थियों के माथे पर स्पर्श करा कर उन सभी को श्रीश्री ठाकुर के चरण-कमलो में समर्पित कर देते।

इति।



रिपोर्ट

रामकृष्ण आश्रम, बीकानेर – संक्षिप्त परिचय
अक्टूबर 1993 से मार्च 2018

रामकृष्ण आश्रम की स्थापना में प्रेरणामूर्ति आदरणीया नैष्ठिक ब्रह्मचारिणी माँ पी० तन्कम्मा का योगदान का उल्लेख किए बिना आश्रम का इतिहास अपूर्ण है। माँ पी० तन्कम्मा का जन्म १५ अक्टूबर १९१८ को तिरूअनन्तपुरम, केरल में हुआ। उन्होंने १९३८ में मद्रास विश्वविद्यालय से संस्कृत भाषा में विशेष योग्यता के साथ एम.ए किया उस समय वे तत्कालीन श्रीरामकृष्ण आश्रम, तिरूअनन्तपुरम के अध्यक्ष, तथा रामकृष्ण मठ एवं मिशन के सहाध्यक्ष ब्रह्मलीन पूज्यपाद स्वामी तपस्यानन्जी महाराज के सान्निध्य में श्रीरामकृष्ण विवेकानन्द भावधारा से प्रभावित रही थी। देवयोग से ई.सन १९४४ में उनकी राजकीय सेवा में संस्कृत प्राध्यापिका के रूप में प्रथम नियुक्ति अलीगढ़ में हुई, वहां की जलवायु अनुकूल नहीं रहने के कारण वे अपने मित्र के आग्रह पर बीकानेर आई और बीकानेर के लेडी एल्गिल में वरिष्ठ अध्यापिका के रूप में कार्य प्रारम्भ किया। एक वर्ष उपरान्त ही ईस्वी सन १९४६ में महारानी सुदर्शना महिला महाविद्यालय, में संस्कृत की प्राध्यापिका एवं कार्यवाहक प्राचार्या का पद भार ग्रहण कर शिक्षण कार्य प्रारम्भ किया। इसी काल खण्ड में श्रीमाँ सारदा देवी के मन्त्र शिष्य स्वामी जपानन्दजी महाराज की प्रेरणा से बीकानेर के स्थानीय भक्तों ने १ अक्टूबर १९४९ में श्रीरामकृष्ण कुटीर की स्थापना की। चूंकि माँ तन्कम्मा, श्रीरामकृष्ण विवेकानन्द भावधारा से तो पूर्व में ही अभिप्रेरित थी और श्रीरामकृष्ण कुटीर में आदरणीय स्वामी जपानन्दजी महाराज के सम्पर्क में आने से उनकी सेवाप्रवृति अधिक मुखरित हुई। ई.सन १९६७ में स्वैच्छिक

सेवा निवृति लेकर वे अपनी बीमार माँ की सेवा के लिए केरल लौट गई। आदरणीय स्वामी जपानन्दजी महाराज ने उन्हें मानस पुत्री का स्नेह दिया और उन्होंने ई.सन १९७२ अपने महाप्रयाण से पूर्व भक्तों से प्राप्त प्रणामी की धनराशि से श्रीरामकृष्ण कुटीर में, अपनी मानस पुत्री के लिए पृथक से साधन भजन के लिए कमरा बनवाने का निर्देश दिया। ईश्वर इच्छा से ऐसे संयोग बने जिसके फलस्वरूप माँ तन्कम्मा अपनी भावी कर्म भूमि, श्रीरामकृष्ण कुटीर बीकानेर में ई.सन १ सितम्बर १९७७ को तपस्या व सेवा के लिए लौट आई।

रामकृष्ण मिशन, 'बेलूड मठ' द्वारा ८ दिसम्बर १९८७ से २ अगस्त,१९८८ तक बीकानेर से ५ किलोमीटर दूर शिवबाड़ी ग्राम में संचालित एक गौ सेवा शिविर में स्थानीय भक्तों को रामकृष्ण मिशन के संन्यासियों तथा इस भावधारा से जुड़ने का सौभाग्य मिला। इस शिविर में रामकृष्ण मठ व मिशन के वयोवृद्ध संन्यासी एवं शिविर प्रभारी पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी शिवानन्दजी महाराज के मन्त्रशिष्य स्वामी अमोघानन्दजी महाराज के सान्निध्य ने स्थानीय भक्तों को कुछ कार्यक्रम करने को प्रेरित किया जिसके फलस्वरूप एक गृहस्थ भक्त श्री कैलाश सिंह जी के निवास पर साप्ताहिक सत्संग तथा पाक्षिक श्रीरामनाम संकीर्तन प्रारम्भ किया गया।

१२ अप्रैल, १९९२ को रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी में आयोजित प्रान्तस्तरीय भक्त सम्मेलन में बीकानेर के स्थानीय भक्तगण सम्मिलित हुए जिन्होंने रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी के मार्गदर्शन में कार्य करने का निश्चय किया, जिसमें सुदूर स्थानों पर प्राथमिक चिकित्सा से वंचित ग्रामीण क्षेत्रों में निःशुल्क औषधि एंव चिकित्सा प्रदान करना, विद्यालय/महाविद्यालयस्तरीय स्वामी विवेकानन्द भाषण प्रतियोगिता तथा स्वामी विवेकानन्दजी का राजस्थान पदार्पण शताब्दी समारोह आयोजित करना आदि मुख्य बिन्दु थे। विवेकानन्द समिति के सभी कार्यो को रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी से स्वामी ब्रह्मलोकानन्दजी महाराज ने समय समय पधार कर सफल बनाया।

६ व ७ दिसम्बर १९९२ को रामकृष्ण मिशन खेतड़ी के सहयोग से बीकानेर नगर में दो दिवसीय प्रांतीय भक्त सम्मेलन आयोजित किया गया उसमें बाहर से महात्मागण स्वामी अकामानन्द जी, कनखल, स्वामी निखिलेश्वरानन्दजी राजकोट, स्वामी सोमेश्वरानन्दजी और स्वामी ब्रह्मलोकानन्दजी खेतड़ी से पधारे। उन सभी के आवास की व्यवस्था पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्दजी की मन्त्र शिष्या माँ पी० तन्कम्मा की प्रेरणा से परम माननीया राजमाताजी श्रीमती सुशीलाकुमारी, बीकानेर ने लालगढ़ पैलेस में साधु निवास में की थी तथा तत्कालीन रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी के सचिव के आग्रह पर माँ पी० तन्कम्मा ने परम माननीया राजमाताजी श्रीमती सुशीलाकुमारी, बीकानेर, से उन्हीं के आस-पास सेवा कार्यो हेतु भूमि प्रदान करने का आग्रह किया जिससे राजपरिवार भी सेवा व सत्संग का लाभ उठा सके। जिसे परम माननीया राजमाताजी श्रीमती सुशीलाकुमारी, बीकानेर ने सहर्ष स्वीकार करते हुए होटल करणी भवन पैलेस के पास २.२१ एकड, (३.५३ बीघा/९६२०६.०६ वर्ग फुट) का भूखण्ड रामकृष्ण आश्रम, बीकानेर के लिए प्रदान किया। इस भूमि का अधिग्रहण १० अक्टूबर १९९३ को श्रीमत् स्वामी सत्यरूपानन्दजी महाराज, सचिव रामकृष्ण मिशन, रायपुर, सचिव रामकृष्ण मिशन खेतड़ी तथा समस्त राजपरिवार बीकानेर, उपस्थित भक्त एवं सुहृदय जनों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ।

परम माननीया राजमाता श्रीमतीसुशीला कुमारी जी बीकानेर ने मां तन्कम्मा के लिए आश्रम के भूखण्ड से जुड़े करणी भवन पैलेस में अस्थाई निर्मित आवास आवश्यकतानुसार सुसज्जित कर प्रदान किया जिसमें वे २३ सितम्बर १९९३ को पधारी तथा इसी स्थान पर आदरणीया नैष्ठिक ब्रह्मचारिणी माँ पी० तन्कम्मा ने अपना शेष जीवन तपस्या में बिताते हुए १ सितम्बर २००६ को श्रीरामकृष्ण लोक के लिए प्रस्थान किया।

इस प्रकार विवेकानन्द समिति ने रामकृष्ण आश्रम के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया और इसका कार्यालय भी समर्पित भूखण्ड के पास ही आदरणीय राजमाता, बीकानेर द्वारा अस्थायी रूप से प्रदत्त भवन में स्थानान्तरित हुआ जहाँ से वर्तमान आश्रम भवन निर्माण तक की समस्त गतिविधियाँ संचालित की जाती रही।

वर्तमान रामकृष्ण आश्रम भवन का शिलान्यास परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी महाराज, सहाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं मिशन, बेलूड़ मठ के कर कमलों द्वारा १७ मार्च १९९७ को हुआ इस अवसर पर परम पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी महाराज के सचिव श्रीमत् स्वामी मुक्तिकामानन्दजी, महाराज के सेवक सप्तऋषि महाराज, उत्तम महाराज, दिल्ली रामकृष्ण मिशन के सचिव श्रीमत् स्वामी गोकुलानन्दजी महाराज, खेतड़ी, रामकृष्ण मिशन के सचिव श्रीमत् स्वामी विपाशानन्दजी महाराज, मुख्य अतिथि मेवाड़ राजघराने के महाराणा मेवाड़ श्री अरविन्द सिंह जी, प्रबन्ध निदेशक, एच.आर.एच.ग्रुप लिमिटेड, उदयपुर एवं विशिष्ट अतिथि बीकानेर सम्भाग के आयुक्त श्री सुधीर भार्गव भी उपस्थित रहे थे। आश्रम के नूतन परिसर का उद्घाटन परम श्रद्धेय श्रीमत् स्वामी स्मरणानन्दजी महाराज, तत्कालीन महासचिव, रामकृष्ण मठ एवं मिशन बेलूड मठ के कर कमलों से श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के पावन पर्व पर, ३ सितम्बर १९९९ को सम्पन्न हुआ।

रामकृष्ण आश्रम की गतिविधियाँ

आश्रम में नियमित रूप से प्रातः मंगल आरती एवं सन्ध्या आरती, श्रीरामकृष्ण वचनामृत पाठ एवं भजन संकीर्तन होता है । आश्रम के कार्यक्रमों का कैलेण्डर निर्धारित है जिसके अनुसार प्रत्येक रविवार को प्रातः साप्ताहिक सत्संग, एकादशी को श्रीरामनाम, प्रदोष को श्रीशिवनाम, पूर्णिमा को श्रीश्यामनाम, शुक्ला द्वितीया को श्रीरामकृष्णनाम तथा अमावस्या को श्रीसारदानाम संकीर्तन आयोजित किये जाते है।

(१) महापुरुषों की जयन्तियाँ

आयोजित कार्यक्रमानुसार श्रीरामकृष्णदेव, श्रीश्रीमाँ सारदादेवी और स्वामी विवेकानन्द जी की जयन्तियाँ धूमधाम से मनाई जाती हैं। इस अवसर पर पूजा अर्चना, भजन, कीर्तन, प्रवचन, पुस्तक पठन एवं दरिद्रनारायण सेवा भी अनुष्ठित होती है। अन्य महापुरुषों की जयन्तियों पर उत्सव उनके जीवन चर्चा के साथ उल्लास से मनाये जाते हैं।

(२) रामचरितमानस एवं गीता प्रवचन

प्रत्येक वर्ष में त्रिदिवसीय प्रवचन एक बार रामचरितमानस एवं एक बार गीता पर वर्ष १९९५ से २०१६ तक ब्रह्मलीन श्रीमत् स्वामी निखिलात्मानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, अद्वैत आश्रम वाराणसी द्वारा किये जाते रहे हैं।

(३) गदाधर प्रकल्प

वर्ष २०११ से २०१४ तक रामकृष्ण मिशन, जयपुर के सौजन्य से गदाधर प्रकल्प को पूज्य महाराज जी के निर्देशानुसार सफलतापूर्वक संचालित किया गया।

(४) अन्य

आश्रम के प्रारम्भ से ही स्वामी विवेकानन्द का राजस्थान पदार्पण शताब्दी समारोह, स्वामी विवेकानन्द की भारत परिक्रमा तथा शिकागो विश्व धर्म महासभा में योगदान सम्बन्धी शतवार्षिकी समारोह, रामकृष्ण मिशन स्थापना शताब्दी समारोह, वार्षिक कार्यक्रम नियमित अन्तराल में पूज्य स्वामी निखिलात्मानन्दजी महाराज, स्वामी सत्यरूपानन्दजी सचिव, रामकृष्ण मिशन, रायपुर, स्वामी ब्रह्मेशानन्दजी, सचिव, रामकृष्ण मिशन, चण्डीगढ़ एवं स्वामी आत्मनिष्ठानन्दजी सचिव, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी के सान्निध्य में आध्यात्मिक शिविर, युवा सम्मेलन, स्वामी विवेकानन्द रथ यात्रा २०१४ आदि कार्यक्रम अनुष्ठित होते रहे है।

(५) दीक्षा कार्यक्रम

आश्रम में वर्ष १९९७ में पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी महाराज, सहाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं मिशन बेलूड़ मठ द्वारा ६५ एवं वर्ष २०१० में पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी स्मरणानन्दजी महाराज, सहाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं मिशन बेलूड़ मठ द्वारा ८६ इच्छुक भक्तों को मन्त्र दीक्षा से अनुग्रहित किया।

(६) होमियो चिकित्सालय

आश्रम में ३ सितम्बर १९९९ से ही होमियोपैथिक चिकित्सालय की निःशुल्क सेवाएं रोगी नारायण के लिए चल रही है। प्रारम्भ में डा०श्रीमती शुभ्रा भट्टाचार्य ने २०१० तक सेवाएँ प्रदान कीएवं तत्पश्चात डा० गार्गी चावला सेवाएँ दे रही है जिसमें औसतन प्रतिदिन ६०-७० रोगी लाभान्वित होते हैं।

(७) सारदा भवन

आश्रम के उत्तरी छोर पर एक बहुद्देशीय सारदा भवन का निर्माण किया गया जिसकी आधारशिला स्थापना पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी शिवमयानन्दजी महाराज ने २५ फरवरी २००६ में की। इस अवसर पर श्रीमत् स्वामी पूज्यानन्दजी महाराज, सचिव, रामकृष्ण मिशन जयपुर, श्रीमत् स्वामी निखिलात्मानन्दजी महाराज, सचिव, रामकृष्ण मिशन, नारायणपुर तथा श्रीमत् स्वामी मुक्तात्मानन्दजी महाराज, सचिव, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी भी उपस्थित थे। सारदा भवन का उद्घाटन परमपूज्यपाद श्रीमत् स्वामी स्मरणानन्दजी महाराज, सहाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं मिशन ने ६ अक्टूबर २०१० को किया गया।

(८) पूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गौतमानन्दजी महाराज का पदार्पण

अक्टूबर १, २०१५ को परमपूज्यपाद श्रीमत् स्वामी गौतमानन्दजी महाराज, सहाध्यक्ष रामकृष्ण मिशन चैन्नई ने बीकानेर पदार्पण किया और आश्रम में नूतन होमियोपैथिक चिकित्सालय भवन की आधारशिला रखी।

(९) परिव्राजक साधु सेवा

राजस्थान भम्रण के लिए रामकृष्ण आश्रम पधारे संन्यासियों की आश्रम के ही साधु निवास में आवास-भोजन की व्यवस्था की गई तथा उनको आगामी गन्तव्यस्थल का किराया भी आश्रम की ओर से दिया जाता है। अभी तक पधारे महात्माओं की सूची परिशिष्ट १ में संलग्न है।

(१०) पुस्तकालय का उद्घाटन

आश्रम परिसर में २७ सितम्बर २०१३ को लोक सेवा के अन्तर्गत पुस्तकालय का उद्घाटन श्रीमत् स्वामी निखिलात्मानन्द जी महाराज, अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, इलाहाबाद द्वारा किया गया। पुस्तकालय में श्रीरामकृष्ण विवेकानन्द भावधारा एवं धार्मिक तथा अन्यान्य विषयों की पांच हजार से अधिक पुस्तकें है जिनका सुधीपाठकों/आध्यात्मिक पिपासु भक्तों द्वारा लाभ उठाया जा रहा है।

(११) प्याऊ

आश्रम में एक जलाधार (प्याऊ) आम जन की सेवा में समर्पित है तथा यह सेवा निरन्तर चल रही है।

(१२) प्रकाशन

आश्रम निर्माण की स्मारिका विमोचन ७ अप्रेल २००१ को ब्रह्मलीन श्रीमत् स्वामी निखिलात्मानन्दजी महाराज द्वारा किया गया। ३० सितम्बर २०१६ को रामकृष्ण मिशन, के बेलुड़ मठ के स्वामी तत्परानन्दजी महाराज की पुस्तक का प्रथम पुष्प "हमारी सनातन उपासना पद्धति" का विमोचन भी ब्रह्मलीन श्रीमत् स्वामी निखिलात्मानन्दजी महाराज द्वारा किया गया। उक्त पुस्तक श्री नितेश कुमार खत्री सुपुत्र श्रीमती पद्मादेवी एवं धर्मपत्नी स्व०श्री हरिकिशन जी खत्री (खेमाणी) ने छपवा कर आश्रम को समर्पित की।

(१३) उद्यान

आश्रम के समस्त भूखण्ड पर डा० अतुलचन्द्रा, डा० रमेश अरोड़ा तथा डा० इन्द्रमोहन वर्मा, उद्यानविद् के मार्गदर्शन एवं ब्रह्मचारी निर्मल के निःस्वार्थ परिश्रम से घने छायादार, फलदार, मनोहारी सजावटी, सुवासित वृक्षों एवं पुष्पों की उन्नत किस्मों, गुलदाऊदी, गुलाब, जवाकुसुम, जुही, चमेली, नीमचम्पा, रातरानी, हारश्रृंगार, चम्पा, स्वर्णचम्पा, कटेली चम्पा, केवड़ा, मधुकामिनी के मुस्कराते फूलों की महक है तो उदय और अस्त होते सूरज के क्रम में प्रफुल्लित मुद्रा में बढ़ रहे नीम, लसौड़ा, गुलमोहर, जैकरण्डा, सहजन, मौलसरी, केला, चीकू, फालसा, जामुन, रेणी, जमरूल, संतरा, किन्नू, नीम्बू, आँवला, शहतूत, आम, अनार, अमरूद और सीताफल आदि अपनी निराली छटा बिखेर रहे हैं।

रामकृष्ण आश्रम, बीकानेर संचालन समिति

● मुख्य प्रन्यासी ●

परम माननीया राजमाताजी साहिबा श्रीमती सुशीलाकुमारी, बीकानेर

● उपमुख्य प्रन्यासी ●

परम माननीया महारानी साहिबा श्रीमती पद्माकुमारी, बीकानेर

● संयोजक प्रन्यासी एवं सचिव ●

अर्जुन सिंह

● उपसचिव एवं कोषाध्यक्ष ●

कैलाश सिंह

● सदस्य प्रन्यासी ●

डा० प्रभा भार्गव, डा० गजेन्द्र सिंह मनोहर, राजाराम पाण्डे एवं ब्रह्मचारी निर्मल

● बैंक ●

स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, पब्लिक पार्क, बीकानेर
बचत खाता संख्या **51095258825**
(IFSC Code No. SBIN0031162)
आश्रम का पॅन नम्बर **AAATR 8192C** है।

● अंकेक्षक ●

बी.के मोदी एण्ड कं. चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट, बीकानेर

● कार्यकर्ता ●

प्रो.नरेन्द्र कुमार शर्मा, विमला शर्मा, हनुमानलाल तंवर, मानवेन्द्र भट्टाचार्य, गजेन्द्र सिंह राजपुरोहित, डा० श्रीमती शुभ्रा भट्टाचार्य, श्रीमती रोशनी, श्रीमती संगीता पंवार, राम सिंह पंवार, ए.जी.शर्मा, किशन सिंह राजपुरोहित, सूमेर सिंह राठौड़, सूबेदार मेजर दिलीप सिंह चौहान, भास्कर देव बर्मन, मनोहर सिंह भाटी, पवन कुमार राजपुरोहित, मोती सिंह, राजूसिंह, रावलसिंह, सुरेन्द्र सिंह गहलोत, अशोक झा, ओमप्रकाश इन्दा, सुरेन्द्र कुमार अरोड़ा, निर्मल पुरोहित, नन्दकिशोर भूण्ड, नरेन्द्र सिंह राठौड़, अभिषेक सिंह चौहान, अभिमन्यु सिंह चौहान, इंजि जे.पी.अरोड़ा, लालाप्रसाद स्वामी, दिलीप गौड़, नरेन्द्र सिंह भाटी, नखत सिंह राठौड एवं श्रवण सिंह राठौड़।

(परिशिष्ट 1)

परिव्राजक साधु सेवा

नाम महात्मागण	अवधि
परमश्रद्धेय	
श्रीमत् स्वामी गहनानन्दजी महाराज, महाउपाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ	१६-१७/०३/१६७
श्रीमत् स्वामी स्मरणानन्दजी महाराज, महासचिव, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ	(१)१-३ /०६/१६६६, (२)०६-०७/१०/२०१०
श्रीमत् स्वामी गौतमानन्दजी महाराज, महाउपाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ चैन्नई	२-४ /१०/२०१५
श्रीमत् स्वामी शिवमयानन्दजी महाराज, बेलूड़मठ	(१) ८-६/०७/२००३, (२)२५-२६/०३/२००५
स्वामी गिरिधरानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ	४-६/०१/१६६८
ब्रह्मलीन श्रीमत् स्वामी निखिलात्मानन्दजी महाराज	(१)१५-१६/०४/१६६५, (२)१०-१२/०२/१६६६, (३)२३-२५/०७/१६६६, (४)१५-१६/०६/१६६७, (५)०३-०५/०१/१६६८, (६)२२-२५/१०/१६६८, (७)१३-१५/०४/१६६६, (८)३०/०८-०४/०६/१६६६, (६)५-६/०४/२००१, (१०) ४-८/१२/२००१, (११)३०/०८-४/०६/२००२, (१२)२५-२७/१२/२००३, (१३)८-१२/०३/२००४, (१४)०६-१२/०२/२००५, (१५)१४-१८/०८/२००६, (१६) १६-२१/११/२००७, लगातार

	लगातार (१७)१४-१५/०६/२००८, (१८)२०-२३/०८/२००६, (१६)२५-२७/१२/२००६, (२०)२५-२७/०२/२०१०, (२१)०६-०७/१०/२०१०, (२२)२०-२२/०८/२०११, (२३) २६-३१/१०/२०११, (२४) २६-३०/०६/२०१३ (२५) १५-२१/०६/२०१४ (२६)३-११/०७/२०१५ (२७)१४-१८/०३/२०१६ (२८)२६/०६-१/१०/२०१६
स्वामी सत्यरूपानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, रायपुर	(१) ८-११/१०/१६६३, (२) २५-२७/०२/२०१०
स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी महाराज, रामकृष्ण आश्रम, राजकोट	(१) ६-७/१२/ १६६२ (२) १२-१४/०४/१६६३
स्वामी मुक्तिकामानन्दजी	१६-१७/३/ १६६७
स्वामी विपाशानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी	१६-१७/३/ १६६७
स्वामी मुक्तात्मानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी	२३-२५/०३/२००५
स्वामी आत्मनिष्ठानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी	(१) १६-१७/३/१६६७, (२) ०६-०७/१०/२०१० (३)७-६/०६/२०१४, (४)६-१०/१०/२०१६
स्वामी ब्रह्मलोकानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी	(१) १४/६/१६६२, (२) ६-७/१२/१६६२ (३) १२-१४/०४/१६६३ (४) १०-१२/०२/१६६६,
स्वामी अकामानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन, कनखल	६-७/१२/१६६२
स्वामी गोकुलानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, दिल्ली	१६-१७/३/१६६७

स्वामी पूज्यानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, जयपुर	(१) १६-१७/०३/१९९७, (२) ८-९/०७/२००३, (३) २५-२६/०३/ २००५
स्वामी देवरूपानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, स्टूडेन्ट होम, रहाड़ा	जुलाई १९९८
स्वामी अमर्षानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़ मठ	१९९९
स्वामी ध्रुवेशानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, लिम्बड़ी	१९९७
स्वामी विमोक्षानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, रांची	१९९५
स्वामी सत्वानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, वाराणसी	१९९६
स्वामी सुब्रतानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, आसनसोल	१९९७
स्वामी इन्द्रात्मानन्दजी महाराज रामकृष्ण मिशन, स्टूडेन्ट होम, राहड़ा	२२ /११/१९९९
स्वामी तन्मयानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, देहरादून	२०००
स्वामी माधवानन्दजी महाराज रामकृष्ण मिशन, देहरादून	१९९९
स्वामी ब्रह्मेशानन्दजी महाराज रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, वाराणसी	२८-३०/११/२०११
स्वामी सुजयानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	१०/७/२०००
स्वामी विर्निमुक्तानन्दजी महाराज, जयपुर	२६ /७/ २०००
स्वामी निरन्तरानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	(१)२६/७/२०००, (२)२५-२६/१०/२०१०
स्वामी दिव्यसंगानन्दजी महाराज, जयरामबाटी	६/८/२०००
स्वामी धीरूपानन्दजी महाराज, उत्तरकाशी	६/८/२०००

स्वामी गीतात्मानन्दजी महाराज, कोलकता	२ /१०/२०००
स्वामी लोकोत्तरानन्दजी महाराज बेलूड़ मठ	३१/१०- १/११/२०००
स्वामी प्रदीप्तानन्दजी महाराज, जयपुर	(१) २/१६६७, (२) ३१/१०-१/११/२०००, (३) ०८-०६/०७/२००३, (४) २२-२३/०७/२००५, (५) २५-/१०/ २०१०,
स्वामी वेदज्ञानानन्दजी महाराज, नरेन्द्रपुर	३१/१०-१/११/२०००
स्वामी अतन्द्रानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	६-८/११/२००२
स्वामी कृतात्मानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	७-६/०३/२००१
स्वामी स्निग्धानन्दजी महाराज,	७-६/०३/२००१
स्वामी अनुकम्पानन्दजी महाराज, आंटपुर	३०/०३-१/०४/२००१
स्वामी आत्मध्यानानन्दजी महाराज, चैन्नई	२७-२८/०७/२००१
स्वामी चन्दशेखरानन्दजी महाराज, लखनऊ	३०/०७-१/०८/२००१
स्वामी सत्यदेवानन्दजी महाराज, कोलकता	१२-१३/१०/२००१
स्वामी त्रिपुरेशानन्दजी महाराज, देवघर	१८-२१/०२/२००२
स्वामी लक्ष्मीकान्तानन्दजी महाराज	१८-२१/०२/२००२
स्वामी प्रत्यगात्मानन्जी महाराज, बेलूड़ मठ	५-६/३/२००२
स्वामी एकानन्दजी महाराज, खेतड़ी	८-१०/७/२००२
ब्र० शंकर महाराज, सिल्चर	८-१०/७/२००२
स्वामी सोमानन्द जी महाराज, कोलकता	१७-१६/१०/२००२
स्वामी अभिज्ञानानन्दजी महाराज, मायेर बाड़ी	२५-२६/१०/ २००२

स्वामी स्नेहमयानन्दजी महाराज, धूलेश्वर	६-११/११/२००२
स्वामी नित्यात्मानन्दजी महाराज, जयपुर	२५-२६/०३/२००३
स्वामी चिरन्तनानन्दजी महाराज, पोरबन्दर	१०-१२/०६/२००३
स्वामी दयानाथानन्दजी महाराज	१०-१२/०६/२००३
स्वामी श्यामलानन्दजी महाराज, सिकराकुलीनग्राम	२६-३०/०६/२००३
स्वामी गौरीनाथानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	१-४/०८/२००३
स्वामी अशोकात्मानन्दजी महाराज, कनखल	७-८/०६/२००३
स्वामी अन्तरानन्दजी महाराज, अलाँग	१-४/१०/२००३
स्वामी देवप्रियानन्दजी महाराज, आसनसोल	१२-१३/१०/२००३
स्वामी हरप्रियानन्दजी महाराज, बलराम मन्दिर, कोलकता	१५/१०/२००३
ब्र० सुभाष महाराज	१५/१०/२००३
ब्र० त्रिदिब महाराज	१५/१०/२००३
स्वामी चिद्सुखानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	१७-१६/११/२००३
स्वामी विश्वात्मानन्दजी महाराज, इटानगर	२३-२४/११/२००३
स्वामी पराविद्यानन्दजी महाराज, चिंगलपेट	२६-२७/०१/२००४
स्वामी विदेहात्मानन्दजी महाराज, रायुपर	(१)२६/०२-४/०३/२००४, (२)४-६/०३/२००६
स्वामी स्वयंस्वैद्यानन्दजी महाराज, त्रिवेन्द्रम	१३-१४/०३/२००४
स्वामी सुमन्त्रानन्दजी महाराज, राँची	१८-२०/०७/२००४
स्वामी तपोमयानन्दजी महाराज, सारदा पीठ, बेलूड़ मठ	११-१२/११/२००४

स्वामी आत्मादीपानन्दजी महाराज, सारदा पीठ, बेलूड़ मठ	११-१२/११/२००४
स्वामी सर्वप्रेमानन्दजी महाराज, सारदा पीठ, बेलूड़ मठ	११-१२/११/२००४
स्वामी अनिकेतानन्दजी माराज, शिलांग	२१-२३/११/२००४
स्वामी गौरांगानन्दजी महाराज, हैदराबाद	२५-२६/१२/२००४
स्वामी प्रियतात्मानन्दजी महाराज, कोलकता	२५-२६/१२/२००४
स्वामी परार्थानन्दजी महाराज, शिलांग	२०-२३/०३/२००५
स्वामी शिवनामानन्दजी महाराज, गौहाटी	१३-१५/०६/२००५
स्वामी अव्ययात्मानन्दजी महाराज, नारायणपुर	२२-२३/०७/२००५
स्वामी मथुरेशानन्द जी महाराज, कोलकता	८-१०/१२/२००५
ब्र० मुक्त चैतन्य, नई दिल्ली	२४-२७/०१/२००६
स्वामी दिव्यरसानन्दजी महाराज, अलांग	०४/०३/२००६
स्वामी वीरभ्रदानन्दजी महाराज, कोईलांडी	२१-२२/०३/२००६
स्वामी ब्रह्मतत्त्वानन्दजी महाराज, रहड़ा	२२-२३/०४/२००६
स्वामी ज्ञानेन्द्ररानन्दजी महाराज, जयपुर	(१)१४-१८/०८/२००६, (२)१२-१५/०६/२००६
स्वामी शेखरानन्दजी महाराज, मनसाद्वीप	१६-१८/१०/२००६
स्वामी नित्यकामानन्दजी महाराज, कोलकता	२५-२६/१०/२००६
स्वामी अप्रमेयानन्दजी महाराज, चैरापूंजी	०५-०७/०१/२००७
स्वामी अराध्यानन्दजी महाराज, चैरापूंजी	०५-०७/०१/२००७
स्वामी दिव्यानन्दजी महाराज,	१६-२१/०३/२००७
स्वामी अमृतेशानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	२०-२१/०३/२००७

स्वामी सदात्मानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	०४-०६/०४/२००७
स्वामी आत्मसुधानन्दजी महाराज, इटानगर	०५-०६/०४/२००७
स्वामी भक्तिमयानन्दजी महाराज, बेलूड़. मठ	०५-०६/०४/२००७
स्वामी अचलात्मानन्दजी महाराज, देवघर	१६-१७/०४/२००७
स्वामी हितरूपानन्दजी महाराज	१६-१७/०७/२००७
स्वामी वागनातानन्दजी महाराज	१८-१६/०७/२००७
स्वामी नित्यज्ञानानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	२७-३८/०८/२००७
ब्र० सौमिन्द्र महाराज, निर्मुक्त चैतन्य, बाग बाजार	२८-३०/१०/२००७
स्वामी अनुक्तानन्दजी महाराज, चैरापूंजी	१६-२०/०१/२००८
स्वामी एकबोधानन्दजी महाराज, शिलांग	१६-२०/०१/२००८
स्वामी यतीशानन्दजी महाराज	१६-२२/०१/२००८
स्वामी अनागहानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	२४-२६/०१/२००८
स्वामी सिद्धिप्रदानन्दजी जी महाराज, नारायणपुर	०४-०६/०२/२००८
स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज, योगोद्यान कोलकता	२५/०७/२००८
ब्र० पुण्य चैतन्य, रामकृष्ण मिशन, नारायणपुर	०५/८/२००८
स्वामी देवप्रभानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन, रायपुर	१६-१७/०६/००८
स्वामी गोपश्वरानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन सेवा प्रतिष्ठान, कोलकता	२२/१०/२००८

स्वामी ब्रह्मविदानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, गारबेटा	०७/११/२००८
स्वामी विनिश्चयानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ एवं मिशन मिदनापुर	०७/१/२००८
स्वामी सुहृदानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ इलाहाबाद	२२-२४/१२/२००८
स्वामी देवतानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, कनखल	(१)०३/०२/२००६ (२)१६-१७/११/०१७
स्वामी सुरवरानन्दजी महाराज चिटगांव, बांगलादेश	०६/०३/२००६
स्वामी भक्तिरूपानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़ मठ	०६/०४/२००६
स्वामी ज्ञानेश्वरानन्दजी महाराज, अद्वैत आश्रम, मायावती	२३/०८/२००६
स्वामी कमलेश्वरानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, नरेन्द्रपुर, कोलकता	१२/१०/२००६
स्वामी पद्मानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, नरेन्द्रपुर, कोलकता	१२/१०/२००६
स्वामी वीतकामानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़ मठ	१२/१०/२००६
स्वामी अरूणात्मानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन सारदापीठ, बेलूड़ मठ	१२/१०/२००६
स्वामी सुमित्रानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ आंटपुर	२४-२५/१०/२००६
स्वामी सन्निरूद्धानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, सारदापीठ, बेलूड़मठ	०६-११/११/२००६
स्वामी देववरानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, सारदापीठ, बेलूड़मठ	०६-११/११/२००६
स्वामी हरदेवानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़मठ	०६-११/११/२००६

स्वामी जगन्निवासानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, रायपुर	१८-१६/११/२००६
स्वामी प्रग्यात्मानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, रायपुर	२५-२७/०२/२०१०
स्वामी तत्परानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन नरोत्तमनगर, अरूणाचलप्रदेश	(१) ०७-११/०४/२०१०, (२) २३/०१/२०१३ (३) २७/०६-४/१०/२०१६
स्वामी हृदयानन्दजी महाराज, सचिव, रामकृष्ण मिशन, जयपुर	(१) ०३/०६/२०१० (२)०६-०७/१०/२०१० (३)२६-३०/१०/२०११ (४)०२-०४/१०/२०१५
स्वामी प्रदीप्तानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, जयपुर	०३/०६/२०१०
स्वामी ज्ञानव्रतानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़मठ	०६-०७/१०/२०१०
ब्र० विज्ञान महाराज	०६-०७/१०/२०१०
स्वामी मायातीतानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द मेमोरियल वरोदड़ा	०४/१२/२०१०
दीपक महाराज रामकृष्ण कुटीर, औंकारेश्वर	०५/१२/२०१०
स्वामी चन्द्रेवश्वरानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, कटिहार, बिहार	२५/१२/२०१०
स्वामी त्यागमयानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन, शिलांग, मेघालय	०६/०१/२०११
स्वामी एकनिष्ठानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन, जयपुर	०७-१०/०१/२०११
स्वामी सर्वमयानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मठ, बामुनमुरा, बारासात, कोलकता	२०-२२/०२/२०११

स्वामी अलिप्तानन्द जी महाराज, श्रीश्रीमातृ मन्दिर, जयरामबाटी	२३/०३/२०११
ब्र० निर्लिप्त चैतन्य, रामकृष्ण मिशन, जयपुर	(१) ०४/०७/२०११, (२) ०५-०७/१०/२०११, (३) ०५/१२/०११, (४) १/१२/२०१२, (५) ०२-०३/०६/२०१३
स्वामी तद्बोधानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन स्टूडेन्ट होम, बेलघरिया, कोलकता	१४/१०/२०११
स्वामी अभिष्टानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन विद्यामन्दिर, बेलूड़मठ	१८/१०/२०११
स्वामी शास्त्रज्ञानानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन विद्यामन्दिर, बेलूड़मठ	१८/१०/२०११
स्वामी कृष्णात्मानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मिशन विद्यामन्दिर, बेलूड़मठ	१८/१०/२०११
स्वामी जयदानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ नागपुर	२६-३०/१०/२०११
स्वामी चिरन्तनानन्दजी महाराज, कनखल	२६-३०/१०/२०११
स्वामी योगयुक्तानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, खेतड़ी	२६-३०/१०/२०११
स्वामी व्रजमोहनानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़मठ	२६/०१/२०१२
स्वामी दिनकरानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ, बेलूड़मठ	२५-२६/०५/२०१२
स्वामी गौरीशानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन, जयपुर	२८-०७ से ४/०८/२०१२.
स्वामी वरप्रदानन्दजी महाराज, पोरबन्दर	०१-०५/१०/२०१२
स्वामी प्रभुनामानन्दजी महाराज, मईल,बांदीपुर	०७/१०/२०१२
स्वामी आलोकेशानन्दजी महाराज, नरेन्द्रपुर	३०/१०/२०१२

स्वामी दिव्यज्ञानान्दजी महाराज, नरेन्द्रपुर	३०/१०/२०१२
स्वामी वासवानन्दजी महाराज	३०/१०/२०१२
स्वामी अर्न्तबोधानन्दजी महाराज, तुमलुक	३१/१०/२०१२
स्वामी स्वरूपात्मानन्दजी महाराज, तुमलुक	२६/०२/२०१३
स्वामी जगदम्बानन्दजी महाराज, राहड़ा	२६/१०/२०१३
स्वामी आर्तिहरानन्दजी महाराज, राहड़ा	२६/१०/२०१३
स्वामी तेजोमयानन्दजी महाराज, कानुपर	०८/११/२०१३
स्वामी गरिमानन्दजी महाराज विशाखापत्तनम	३०/११/२०१३
स्वामी श्रीवत्सानन्दजी महाराज चांदीपुर	१०/०१/२०१४
स्वामी ब्रजमोहनानन्दजी महाराज इटानगर	१०/२/२०१४
स्वामी सारदेशानन्दजी महाराज कर्नाटक	२२/३/२०१४
स्वामी सुमेधानन्दजी महाराज, हास्पेट, कर्नाटक	(१)२२/३/२०१४ (२) २२/१/०१५
स्वामी चैतन्यानन्दजी महाराज कर्नाटक	२२/३/२०१४
स्वामी बुद्धियोगानन्दजी महाराज, कर्नाटक	२२/३/२०१४
स्वामी स्वात्मानन्दजी महाराज, बैंगलूरू	२२/३/२०१४
स्वामी पद्मानन्दजी महाराज, रांची, झारखण्ड	२२/३/२०१४
स्वामी तपस्यानन्दजी महाराज, पोर्ट ब्लेयर	२२/३/२०१४
स्वामी तद्भवानन्दजी महाराज, बरिषा, कोलकता	२८/३/२०१४
स्वामी अकुण्ठात्मानन्दजी महाराज, बरिषा, कोलकता	२२/३/२०१४
ब्र० सुरेश चैतन्य	२२/३/२०१४

स्वामी नन्दीश्वरानन्दजी महाराज, वाराणसी	३१/३/२०१४
स्वामी अजीतानन्दजी महाराज, बेलूड़मठ	३१/३/२०१४
स्वामी शान्तिनाथानन्दजी महाराज, वाराणसी	३१/३/२०१४
स्वामी गंगाधरानन्दजी महाराज, वाराणसी	३१/३/२०१४
स्वामी बालगोपालानन्दजी महाराज, पुणे	३१/३/२०१४
स्वामी ज्ञानदीपानन्दजी महाराज, बेलूड़मठ	०४/४/२०१४
स्वामी योगिन्द्रानन्दजी महाराज, बांकुड़ा	०४/४/२०१४
स्वामी आत्मगतानन्दजी महाराज, इटानगर	१०/४/२०१४
स्वामी ब्रह्मस्थानन्दजी महाराज, नागपुर	१५/४/२०१४
स्वामी शक्तिसारानन्दजी महाराज, रांची	३१/७/२०१४
स्वामी शिवकृपानन्दजी महाराज, बैंगलोर	२५/८/२०१४
ब्र० अरूण महाराज, खेतड़ी	७-६/६/२०१४
स्वामी दिवाकरानन्दजी महाराज, नरोत्तमनगर	१०/१०/२०१४
स्वामी इष्टव्रतानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, नरेन्द्रपुर, कोलकता	१०/१०/२०१४
स्वामी महीधरानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मिशन आश्रम, नरेन्द्रपुर, कोलकता	१०/१०/२०१४
स्वामी अमृततत्वानन्दजी महाराज, बेलूड़मठ	११/११/२०१४
स्वामी रघुरामानन्दजी महाराज, बैंगलोर	११/११/२०१४
स्वामी दिव्यप्रेमानन्दजी महाराज	२३/११/२०१४
स्वामी कुशलानन्दजी महाराज, मुम्बई	३०/११/२०१४
स्वामी महावीरानन्दजी महाराज, रायपुर	१६/१२/२०१४

स्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी महाराज, कर्नाटक	२२/०१/२०१५
स्वामी अभयानन्दजी महाराज, कर्नाटक	२२/०१/२०१५
स्वामी सुखात्मानन्दजी महाराज, ऊटी	६-७/०३/२०१५
स्वामी वीरेशानन्दजी महाराज, बेलूड़ मठ	६-७/०३/२०१५
स्वामी रघुवीरानन्दजी महाराज, राजकोट	६-७/०३/२०१५
स्वामी शान्तिव्रतानन्दजी महाराज, मैसूर	२३-२४/०७/२०१५
स्वामी रामाश्रयानन्दजी महाराज, योगोद्यान मठ, काकुरगाछी कोलकता	८-१०/०८/२०१५
स्वामी आत्मत्यागानन्दजी महाराज, चैन्नई	२-४/१०/२०१५
स्वामी देवप्रभानन्दजी महाराज, जयपुर	२००८,२-४/१०/२०१५, १६-२०/२/१०१८
स्वामी गतमोहनानन्दजी महाराज, सिकराकुलिनग्राम	२३-११/११/२०१५
स्वामी परार्थानन्दजी महाराज, सिकराकुलिनग्राम	२३-११/११/२०१५
स्वामी प्रभुमयानन्दजी महाराज, नरोत्तमनगर	२३-११/११/२०१५
स्वामी करूणानन्दजी महाराज, इलाहाबाद	२४/०६/२०१६
स्वामी बलदेवानन्दजी महाराज, बेलघरिया कोलकता	३/१०/२०१६
स्वामी भद्रात्मानन्दजी महाराज, बेलघरिया कोलकता	३/१०/२०१६
स्वामी हितकरानन्दजी महाराज, खेतड़ी	७-८/१०/२०१६
स्वामी सर्वगानन्दजी महाराज, सचिव, रामकृष्ण मिशन नरेन्द्रपुर, कोलकता	७-८/१०/२०१६
स्वामी योगयुक्तानन्दजी महाराज, खेतड़ी	७-८/१०/२०१६

स्वामी त्रिगुणेशानन्दजी महाराज, गौरहाटी	११/०३/२०१७
स्वामी चिदम्बरानन्दजी महाराज, मैंगलोर	११/०३/२०१७
ब्र० हरि चैतन्य महाराज, खेतड़ी	२७/०३/२०१७
स्वामी सद्व्रतानन्दजी महाराज, भुवनेश्वर	२७/०३/२०१७
स्वामी शिवेषानन्जी महाराज, कूचबिहार	०३/०६/२०१७
स्वामी अनन्तात्मानन्दजी महाराज, खेतड़ी	०२/०६/२०१७
स्वामी दीप्तेशानन्दजी महाराज, सरिषा	१०/१०/२०१७
स्वामी श्यामसुन्दरानन्दजी महाराज, सरिषा	१०/१०/२०१७
स्वामी महाकालानन्द, रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, कनखल	१६-१७/११/२०१७

(परिशिष्ट 2)

विशिष्ट अतिथीगणों की सूची

परम माननीया राजमाताजी श्रीमती सुशीला कुमारी जी बीकानेर, परम माननीय महाराजा श्री नरेन्द्र सिंहजी बहादुर, बीकानेर,परम माननीया राजकुमारी दक्षा कुमारी जी, बीकानेर , परम माननीया राजकुमारी सिद्धि कुमारी जी, विधायक पूर्व, बीकानेर, परम माननीया श्रीमती माजीसा मनहर कुमारीजी साहिबा पत्नी स्व० श्री महाराज अमर सिंहजी बीकानेर, परम माननीया राजमाताजी श्रीमती हितेन्द्र कुमारी जी दांता रामगढ़, बनासकांठा ,गुजरात, परम माननीया राजमाताजी श्रीमती कृष्णा कुमारी जी सुकेत, हिमाचलप्रदेश, परम माननीयश्रीजी हुजुर अरविन्द सिंह जी महाराणा, उदयपुर, राजकुमारी विजयराज कुमारी जी, श्री सुधीर भार्गव, आयुक्त, बीकानेर, डा. ब्रह्माराम चौधरी, प्रो. मुनेन्द्रकुमार ऐरन, डा. रविन्द्र कुलश्रेष्ठ, डा धर्मचन्द जैन, डा. गजेन्द्र सिंह मनोहर, डा. दीवान बहादुर कोचर, श्री विपिन गोयल, डा. स्नेहलता शुक्ला, डा. उमाकान्त गुप्ता, डा. प्रकाशवती शर्मा, श्री मनमोहनसिंह यादव, डा० प्रभा भार्गव, श्री शिवभगवान राजपुरोहित, सहायक आयुक्त देवस्थान विभाग, श्री दलपत सिंहदिनकर आर.ए.सी कमान्डेंट , श्री शरतचन्द्र श्रोत्रिय, अतिरिक्त सत्र न्यायधीश, श्री ओ.पी.मीणा उपायुक्त, आयकर, श्री लक्ष्मीनिवास झुंझनुवाला, एल एन जे, भीलवाड़ा ग्रुप ऑफ इण्डस्ट्रीज, नई दिल्ली, डा. (श्रीमती) शुभ्रा भट्टाचार्य, श्री द्वारकानाथ अनेजा एस.बी.बी.जे सहायक प्रबन्धक, डा.(श्रीमती) ज्योत्सना ओझा, डा.एस. कश्यप, डा.विजय बोथरा, डा. देवन्द्र अग्रवाल, डा.(श्रीमती) पुष्पलता भटनागर, डा. घनश्याम पंवार, डा. शरद कल्ला, डा.(श्रीमती) प्रेम राठौड़, डा. केदारशर्मा , श्री एन. आर. कालरा, आयकर उपायुक्त, श्री हनुवंत सिंह, श्री गोपाल

उपाध्याय, डा. हरनामसिंह एडवोकेट, सुश्री विमला शर्मा, प्रो. एन. के.शर्मा, श्री नन्दलाल बंसल, श्री भँवर पुरोहित, श्री सोहनलाल सांखला, सुश्री श्वेता जांगिड़, वैद्य महेन्द्र प्रकाश चाडा, श्री नन्दलालजी टाँटिया, कोलकता, श्री भरत चूड़ीवाला, मुम्बई, डॉ० (श्रीमती) नीलकमल गहलोत, डॉ० गार्गी चावला, डा० हेमन्त कुमार पाण्डे, विभागाध्यक्ष, रसायनशास्त्र, डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर, धर्मपाल सिंह जैन, व्याख्याता डा० सुशीला कुमारी ओझा, व्याख्याता डा० मधु अग्रवाल, डा० (श्रीमति) डा० अनिला पुरोहित प्रोफेसर (इतिहास), डा० दिग्विजयसिंह निदेशक, महाविद्यालय शिक्षा, सुधांशु मोहन मिश्र 'आलोक',वरिष्ठ मण्डल प्रबन्धक, डॉ०(श्रीमती) मैना निर्वाण, विभागाध्यक्ष राजनीति, डूंगर महाविद्यालय, सुश्री स्निग्धा पाण्डे, श्रीमती पूजा शर्मा, डॉ० शुचिस्मिता चटर्जी, इन्जि० डी०आर०जोशी, मुख्य अभियता, सुश्री मोनिका पुरोहित, इंन्जि.बृज गोपाल व्यास, प्रो.एल.एन खत्री इत्यादि।

संगीत

स्वामी सर्वगानन्दजी, स्वामी अनन्तात्मानन्दजी, स्वामी योगयुक्तानन्दजी, श्री केशव शर्मा, लालाप्रसाद स्वामी, राजाराम पाण्डे, नरेन्द्र सिंह राठौड़ श्रीमती मीना रामावत, मास्टर तरूणकान्त, श्रीमती पुष्पा भार्गव, रामचन्द्र सिंह पंवार, श्रीमती अरूणा जांगिड़, इत्यादि।

(परिशिष्ट ३)

‘गहन आनन्द चिन्तन’ के प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग देने वाले महानुभावों की सूची

०१ डॉ० अनिन्ध्य सुन्दर मण्डल, आसनसोल, पं० बंगाल
०२ श्री देबतोष एवं श्रीमती सोनिया नाग, कोलकाता
०३ श्री शुभंकर दास गुप्ता, कोलकाता
०४ श्रीमती देविका धवल महाजन, बेंगलुरु
०५ श्रीमती जयन्ती शर्मा, नक्सल काठमांडू, नेपाल
०६ श्री धवल दिलीप महाजन, बेंगलुरु
०७ श्रीमती दीपा वैद, श्री मधुसूदन वैद, सुश्री विदुषी वैद, सुश्री शुभांगी वैद, सुश्री स्वास्ती दोषी, तारा खेतान लखनऊ
०८ श्रीमती देवी प्रिया गुहा विश्वास, नई दिल्ली
०९ श्री नरेश कुमार शर्मा, हिमाचल प्रदेश अपने स्व० पिता-माता श्री अमरनाथ एवं श्रीमती रतनी देवी की स्मृति में
१० श्री गौरव पुरोहित स्व० माता श्रीमती पुष्पलता की स्मृति में, हिमाचल प्रदेश
११ श्री नीलोत्पल चौधरी, नई दिल्ली
१२ श्री जयन्त एवं सोमा चट्टोपाध्याय, आबूधाबी
१३ श्री अमित कुमार, नई दिल्ली
१४ सुश्री आलोकानन्दा, अरूणाचल प्रदेश अपने स्व० पिता माता श्री ज्योतिष चन्द्र एवं श्रीमती शंकरी की स्मृति में
१५ श्री अनिल कुमार महतो, नई दिल्ली
१६ श्रीमती चिन्मयी सेन गुप्ता, नई दिल्ली
१७ श्रीमती बुला बनर्जी, नई दिल्ली
१८ श्री गिरेश गहलोत, जालौर, राजस्थान
१९ श्री सुरेन्द्र कुमार अरोड़ा, बीकानेर अपने स्व० पिता-माता श्री जयनारायण खत्री एवं श्रीमती कस्तूरी देवी की स्मृति में

२० श्री शान्तनु नाईक, सिल्चर
२१ सुश्री रूपांजना दत्त चौधरी, सिल्चर
२२ श्री रजत घोष, सिल्चर
२३ श्रीमती रूम्की गुप्ता, कोलकाता, पुज्यपाद ब्रह्मलीन स्वामी तत्त्वस्थानन्दजी महाराज, रामकृष्ण मठ एवं मिशन, स्मृति शेष, श्री बसन्तीदास गुप्ता एवं रबिन्द्र दास गुप्ता की स्मृति में
२४ श्री अमर चक्रवर्ती, बोंगईगांव, आसाम
२५ गुप्त सहयोग
२६ श्री स्वागतो सोम
२७ श्री गोविन्द मिश्रा
२८श्री कल्याण चक्रवर्ती, श्री अनिल कुमार, रेणुकाना चक्रवर्ती, अजय कुमार मुखर्जी की स्मृति में शिबरामपुर कोलकता
२६ श्री अर्पित तोलानी, श्रीमती कोमल तोलानी, पुणे
३० श्री नीलोत्पल सेन गुप्ता
३१ सुश्री सर्बानी देब, कोलकाता
३२ श्रीमान जे
३३ डॉ० (श्रीमती) शुभ्रा भट्टाचार्य, बीकानेर
३४ श्री शिबब्रत चक्रवर्ती एवं श्रीमती अनुराधा चक्रवर्ती हैदराबाद, ब्रह्मलीन पूज्यपाद स्वामी प्रमेयानन्दजी महाराज सहाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं मिशन की स्मृति में
३५ श्री गिरिबन राय, सिल्चर
३६ श्री अमरीश शर्मा, बीकानेर
३७ श्री स्वरूप भट्टाचार्य, कोलकाता
३८ श्री जोयेश बागची, कोलकाता
३६ श्री चिरंजीव चक्रवर्ती, दिल्ली
४० श्री समर घोष, श्रीमती सायोनी घोष हैदराबाद एवं कुमार नील घोष, ब्रह्मलीन पूज्यपाद स्वामी गोकुलानन्दजी महाराज की स्मृति में
४० स्वामी तत्परानन्द

उक्ति संकलन

ब्रह्मलीन परम पूज्यपाद स्वामी गहनानन्दजी महाराज के कुछ स्फुट उपदेश

१ प्राचीन साधुओं की बात है, सर्वदा स्मरण रखो कि यहाँ क्यों आए हो? गुरु महाराज यहाँ विराजित हैं, वे मन्दिर में बैठे हैं। प्रतिदिन की प्रार्थना और जप के रूप में ही जहाँ भी जाओगे, जो भी करोगे, सुबह और शाम उन्हें नियमित रूप से बताओगे। यदि बाहर जाना हो तो उनकी अनुमति लेना और वापिस लौट कर आने पर उन्हें बताना। श्रीश्री जगन्नाथ मन्दिर में रात्रि में उनकी सेवा के पश्चात पुरोहित लोगों द्वारा उन्हें दैनन्दिन कार्यक्रम की जानकारी देने की प्रथा है, जैसे कि वे ही वहाँ के राजाधिराज हैं, एकमात्र वे ही प्रभु हैं। इसलिए सोने से पहले उनको सब बताया जाता है। इसी प्रकार तुम लोग भी उन्हें बताया करो। मैं यह कर रहा हूँ, वह कर रहा हूँ इत्यादि। अच्छा-बुरा, यहाँ तक कि तुम्हारी होने वाली भूल-भ्रान्ति भी उनको बताया करो। वचनामृत में पढ़ा है न कि उनके साथ एक सम्पर्क बनाना पड़ता है, वह इसलिए कि यह जानना होता कि वे कौन है? और हम उनके कौन हैं? यह जानने से ही तो सब हो गया। यही सब हम लोगों ने प्राचीन साधुओं से सुना है।

२ मैंने स्वामी अचलानन्दजी महाराज को बोला था, 'महाराज, स्थानीय महन्त महाराज ऐसे हैं कि, हम लोग सन्ध्या-समय जप-ध्यान के लिए बैठने जाने के समय ही कार्य के लिए बुला लेते हैं।' मैंने सोचा कि वे उक्त महन्त महाराज को बुला कर बोलेंगे, 'उसे इस प्रकार न बुला कर जप-ध्यानादि करने दिया

करो।' किन्तु महाराज जी ने मुझे कहा, 'यदि वे तुम्हें कोई कार्य हेतु किसी भी समय बुलाए, चाहे वह तुम्हारे जपादि का ही समय क्यों न हो, तुम गुरु महाराज के पास प्रार्थना करना, ऐसा बोलना कि, मुझे इस समय अन्य कार्य करने के लिए कहा गया है इसलिए मैं अभी यहाँ बैठ कर तुम्हारी सेवा-पूजा नहीं कर पाऊँगा। मुझे आशीर्वाद दीजिए, जिससे मैं दिया गया कार्य सटीक भाव से सम्पन्न कर पाऊँ।' हम लोगों को इसी प्रकार मनोभाव रखना चाहिए। यदि तुम लोग इस प्रकार अभ्यास कर पाओ और अगर उसका जरा सा भी स्वाद पा जाओ, तो और कोई संघर्ष नहीं रह जाएगा। वे जब भी हमें बुलाएंगे और जो भी सेवा का आदेश देंगे, हमें प्रस्तुत रहना चाहिए, ऐसा ही स्वामीजी हम लोगों से आशा करते हैं।

३ तुम अस्वस्थ रहने पर भी आश्रम में मंगल आरती में अवश्य ही आना। श्रीश्रीमाँ के जीवन की घटना तो तुमको पता ही है। उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं था और वे एक दिन ऐसा सोचकर कि 'ठीक है, अगले दिन भोर में बिस्तर त्याग नहीं करूँगी।' किन्तु उन्होंने स्वयं ही अनुभव किया कि बाद में पहले जैसी दिनचर्या में आने के लिए उन्हें दीर्घ काल तक संघर्ष करना पड़ा। शरीर का ऐसा ही स्वभाव होता है।

४ प्रतिकूल परिस्थितियों में स्वामी गहनानन्दजी महाराज सर्वदा ही अविचलित, प्रशान्त, धैर्यशील और प्रसन्नचित रहते। जब उनसे उनके मानसिक स्थिरता के रहस्य की बात पूछी जाती तो उनका स्वतः स्फूर्त प्रत्युत्तर रहताः

गीता में पढ़ा नहीं ?

'यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचालयते।।'

(भगवद्गीता ६-१२)

अर्थात जो परमानन्द लाभ करने के अतिरिक्त कुछ भी लाभकारी अनुभव नहीं करता है एवं परमात्मा प्राप्ति रूप वही अवस्था में स्थित हो जाता है तो महादुःख में भी विचलित नहीं होता। प्रसंग क्रम में, यही था उनका प्रिय गीता का श्लोक।

५ श्रीश्रीठाकुर हमारे केन्द्रस्थल हैं। जीवन के प्रत्येक स्तर में यह भूलने से नहीं चलेगा। वे ही हमारे परिवार के कर्ता, वे ही हमारे आश्रम के अधिपति हैं। जब भी विपदाग्रस्त होएं, समस्या के सम्मुख होएं, उनको बताना, उनको बोलना, उनके सामने प्रार्थना करना।

६ सब समय यही स्मरण रखना कि मैं उनका ही हूँ, श्रीश्रीठाकुर का प्रतिनिधि। प्रतिनिधि का निजस्व कुछ नहीं रहता है। यही भाव सर्वदा मन में जाग्रत रहने पर कभी भी बेताल पैर नहीं पड़ेगा।

७ चरित्र-गठन ही असली बात है। ठाकुर-स्वामीजी के आदर्श से चरित्र गठन कर लेना होगा। चरित्र-गठन के लिए आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता का अवश्य ही महत्त्व रहता है।

८ हम सभी के लिए यह आवश्यक है कि त्याग और सेवा के आदर्श में अनुप्राणित हो जाऐं। हमलोग जो श्रीश्रीठाकुर के इस आदर्श के साथ संस्पर्श में आ गऐ हैं हमारा एक ही लक्ष्य होना चाहिए और वह है सभी का कल्याण।

९ आज के इस युग में यह सन्धि क्षण ही है जब श्रीश्रीठाकुर, माँ और स्वामीजी की भावधारा को आश्रय करके हमारा कर्तव्य बन जाता है कि हम एक योगसूत्र की रचना करें, और यह योगसूत्र जिसका मूलमन्त्र होगा 'सभी के लिए निःस्वार्थ-प्रेम।'



श्रीश्रीरामकृष्णार्पणमस्तु